जैनसाहित्यसिरीज—नं० २

नागकुमारचरित ।

उदयलाल काशलीवाल ।

नागकुमारचरित ।

जैनसाहित्यसिरीज नं० २

नागकुमारचरित ।

उभय-भाषाकविचक्रवर्त्ती मल्लिषेणसूरिके
नागकुमारचरितका

हिन्दी-सार ।

लेखक—
उदयलाल काशलीवाल ।

प्रकाशक—
हिन्दी-जैनसाहित्यप्रसारक-कार्यालय,
बम्बई ।

प्रथमावृत्ति] दिसम्बर १९१३ ई० [मूल्य ।=)

Printed by C. S. Deole, in the Bombay Vaibhav Press,
Servants of India Society's Building, Sandhurst Road, Bombay.
and
Published by Biharilal, Proprietor Hindi-Jain-Sahitya-Prasarak
Karyalaya, Chandawadi, Bombay.

उपहार।

प्रेममयी मा,

स्वर्गमें आपके लिए यद्यपि कुछ कमी नहीं, पर तब भी यह पवित्र उपहार आपके अनमोल गुणोंके स्मरणार्थ चरणोंमें लेकर मैं उपस्थित हूं। इसे पुत्र-प्रेमसे स्वीकारकर अपने प्रिय पुत्रको आशीष दो कि-वह ऐहिक और पारमार्थिक कर्त्तव्य पथकर निश्चल रहकर पवित्रतासे जीवन पथपर चले-उसे आशीर्वाद दो कि वह अपनी जातिका और अपने देशका सेवक बनकर अपना जीवन सार्थक करे।

तुम्हारा-

प्रियपुत्र लेखक।

लेखकका हृदय।

संस्कृतका जैनसाहित्य-समुद्र अगाध है। उसमें एकसे एक अनमोल रत्न हैं। ऋषियोंने उनके संग्रह करनेमें यत्परोनास्ति परिश्रम किया था। वे सब यदि आज संसारकी आंखोंके सामने रखे हुए होते तो उनके द्वारा उसका बड़ा उपकार होता और साथमें उन निष्काम महात्माओंकी कीर्त्ति दिगन्त व्यापिनी होती। उनके पवित्र विचारोंका सिक्का प्रत्येक मनुष्यके हृदयपर अंकित होता। पर समाजके दुर्भाग्यने ऐसा न होने दिया।

उनमें लाखों करोडोंको तो जुल्मियों-धर्म और देशद्रोहियों-के निर्दय लोमहर्षण-अत्याचारने नष्ट कर दिये, हजारों वर्षोंकी संग्रह की हुई सम्पत्ति पापियोंने क्षणभरमें नामशेष करदी। उसके बाद भी थोड़ी बहुत सम्पत्तिको परोपकारियोंने पृथ्वीमें गाड़कर बचाया और वह कुछ अंशोंमें अभीतक सुरक्षित है। पर आज हम उनके कुलको कलंकित करनेवाले, आलसी, अकर्मण्य, कृतघ्नी ऐसे पैदा हुए कि अपने बचे बचाये वैभवकी भी सुरक्षा नहीं करते। उसका आलमारियों और भण्डारोंमें पड़े पड़े सड़ा करना, दीमक और चूहोंका खाद्य बनना हम बुरा नहीं समझते पर संसारके सामने उसे लाना पाप समझते हैं। अपनी पवित्र सम्पत्तिकी दुर्दशाका प्रायश्चित्त हमारे लिए क्या होगा, यह भगवान ही जाने। हमारे लिए यह डूब मरनेकी बात है कि हम अपने पुरखाओंकी सम्पत्तिको नष्ट करके उनके स्वर्गीय आत्माको बेहद कष्ट पहुंचा रहे हैं।

हम चाहें तो अब भी सम्हल सकते हैं—अब भी अपने अनमोल रत्नोंकी रक्षा कर सकते हैं । हमें उदार हृदय बनकर सबके हितार्थ उन रत्नोंको प्रकाशित करने लिए दृढ़ संकल्प होना चाहिए । इसीमें हमारा, हमारे धर्मका और हमारे देशका भला है ।

उक्त महत् उद्देश्यको लेकर हम भी आज अपना पैर आगे बढ़ाना चाहते हैं । हमें भय है कि कहीं इस कर्त्तव्य पथसे हम खिसल न जायँ इसलिए हम उस अनन्त शक्तिशाली परमात्मासे प्रार्थना करते हैं कि वे हमें सम्हाले रहें और प्रतिदिन हमारी शक्तियोंको बल प्रदान करते रहें, जिससे हम बिना किसी विघ्नबाधाके आगे आगे बढ़ते चले जायँ ।

हमने " **जैनसाहित्यसिरीज़** " इसी उद्देश्यसे निकालना आरंभ की है । जिसका पहला ग्रन्थ इस समय पाठकोंके करकमलोंका भूषण है ।

आगे भी इसमें जैन साहित्यके यशस्तिलक, गद्यचिन्तामणि, पुरुदेवचम्पू, धर्मशर्माभ्युदय आदि उत्कृष्ट ग्रन्थ हिन्दी भाषामें प्रकाशित हुआ करेंगे । जिससे सर्व साधारणको लाभ पहुँचेगा । इसके लिए पाठकोंसे हम प्रार्थना करते हैं कि वे इस सिरीज़का प्रचारकर जैनसाहित्यका गौरव बढ़ानेकी कोशिश करें ।

यह मूल ग्रन्थ उभयभाषाकविचक्रवर्त्ती श्रीमल्लिषेण सूरिका बनाया हुआ है । आपका संक्षिप्त परिचय आगे दिया है । इसकी कथा बड़ी सुन्दर और रसीली है इसलिए हमने इसे प्रकाशित किया है ।

सार लिखनेके सम्बन्धमें हमें यह कहना है कि हमने कथाका भाव लेकर स्वतंत्र रीतिसे इसे लिखा है और जहां कहीं जरूरत समझी है

वहां कुछ विषय बढ़ा भी दिया है। जैसे इसमें मद्य, मांस, मधुके छोड़नेका उपदेश अथवा अणुव्रत आदि बहुत ही संक्षिप्तमें लिखे थे, उन्हें हमने कुछ विस्तृत कर दिये हैं। ऐसा करनेसे हमारा अभिप्राय सर्व साधारणके लाभकी दृष्टिको लिए हुए है। पाठकोंको यह अरुचिकर न होगा।

हमारे इस प्रयत्नमें कुछ त्रुटि हो तो निःसंकोच भावसे पाठकोंको सूचित करना चाहिए। हम उसके सुधारनेका अवश्य प्रयत्न करेंगे।

अज्ञ–

उदयलाल काशलीवाल।

महाकवि मल्लिषेणका परिचय ।

इस छोटेसे ग्रन्थके कर्त्ताका नाम **मल्लिषेण** है । मल्लिषेण नामके पहले बहुतसे आचार्य हो गये हैं, और उनमेंसे बहुतसे ऐसे हैं जिन्होंने अनेक ग्रन्थोंकी रचना भी की है । हम जिन मल्लिषेणके विषयमें लिखना चाहते हैं, उनसे कुछ ही वर्षों पीछे एक मल्लिषेण नामक दूसरे आचार्य हो गये हैं, जो पहले मल्लिषेणकी ही श्रेणीके विद्वान् थे । इस थोड़ेसे अन्तरके कारण अभीतक बहुत लोग दोनोंको एक ही समझते थे । परन्तु अब यह भ्रम दूर हो गया है । पहले मल्लिषेण **उभयभाषाकविचक्रवर्त्तीके** पदसे सुशोभित थे और दूसरे **मलधारिन्** पदसे युक्त थे ।

उभयभाषाकविचक्रवर्त्ती मल्लिषेणने महापुराणकी प्रशस्तिमें अपना परिचय इस प्रकार दिया है:—

तीर्थे श्रीमुलगुन्दनाम्निनगरे श्रीजैनधर्मालये
स्थित्वा श्रीकविचक्रवर्त्तियतिपः श्रीमल्लिषेणाह्वयः ।
संक्षेपात्प्रथमानुयोगकथनव्याख्यान्वितं शृण्वतां
भव्यानां दुरितापहं रचितवान्निःशेषविद्याम्बुधिः ॥
वर्षैकत्रिंशताहीने सहस्रे शकभूभुजः ।
सर्वजित्वत्सरे ज्येष्ठे सशुक्रेपञ्चमीदिने ॥
अनादितत्समाप्तं तु पुराणं दुरितापहम् ।
जीयादाचन्द्रतारार्कं विदग्धजनचेतसि ॥

१ स्याद्वादमंजरीके कर्त्ताका नाम भी मल्लिषेण ही है, परन्तु वे श्वेताम्बर सम्प्रदायमें हुए हैं । २ इस पदका अर्थ समझमें नहीं आता और भी दो एक विद्वान् इस पदसे सोभित रहे हैं, जैसे कि मलधारिश्रीराजशेखरसूरि ।

श्रीजिनसेनसूरितनुजेन कुदृष्टिमतप्रभेदिना ।
गारुडमंत्रवादसकलागमलक्षणतर्कवेदिना ॥
तेन महापुराणमुदितं भुवनत्रयवर्त्तिकीर्त्तिना ।
प्राकृतसंस्कृतोभयकवित्वधृता कविचक्रवर्त्तिना ॥

इन श्लोकोंसे मालूम होता है कि महाकवि **मल्लिषेण** संस्कृत और प्राकृत दोनों भाषाओंके महाकवि थे—कवियोंके चक्रवर्त्ती थे, व्याकरण, न्याय, आगम, गारुड़ मंत्रवाद आदि सब विषयोंके ज्ञाता थे, बड़े २ मिथ्यादृष्टियोंको उन्होंने पराजित किया था और सब ओर उनकी कीर्त्ति फैल रही थी। शक संवत् ९६९ की ज्येष्ठ सुदी ९ को उन्होंने **मूलगुंद** नामक तीर्थके जिनमन्दिरमें अथवा वसतिकामें महापुराणको समाप्त किया था । यह **मूलगुंद** नामका ग्राम अब भी है और **धारवाड़** जिलेके **गदग** तालुकामें उसकी गणना की जाती है । पहले शायद यह स्थान बहुत प्रसिद्ध रहा होगा, परन्तु अब नहीं है। उन्होंने आपको **श्रीजिनसेनसूरि**का पुत्र बतलाया है। इससे जान पड़ता है कि, गृहस्थजीवनमें जो इनके पिता होंगे, पीछेसे उन्होंसे दीक्षा ले ली होगी और मुनिजीवनमें उनका नाम **जिनसेन** रक्खा गया होगा , जिनसेन नामके भी कई आचार्य हो गये हैं, इससे यह पता लगाना कठिन है कि, इनके पिता कौन थे। **आदिपुराण**के कर्त्ता **भगवज्जिनसेन**का समय शक संवत् ७६९ तकका निश्चय हो चुका है और **हरिवंशपुराण**के कर्त्ता **जिनसेन**ने हरिवंशपुराण शक संवत् ७०५ में समाप्त किया है, सो उक्त दो जिनसेन तो मल्लिषेणके पिता हो नहीं सकते हैं, क्योंकि इन दोनोंसे मल्लिषेणका समय दो सौ वर्ष पीछे है। अतः इनके पीछे होनेवाले कोई तीसरे ही जिनसेन इनके पिता होंगे।

मल्लिषेणकृत महापुराण बहुत छोटा है। केवल दो हजार श्लोकोंमें उसकी संक्षेपतः रचना की गई है। परन्तु ग्रन्थ बहुत सुन्दर है और उसमें अनेक विषय ऐसे आये हैं जो दूसरे ग्रन्थोंमें नहीं हैं। इसकी एक प्रति कोल्हापुरके भट्टारक **लक्ष्मीसेन**जीके मठमें प्राचीन कानड़ी लिपिमें ताड़पत्रोंपर लिखी हुई है। उसपर इस बातका उल्लेख नहीं है कि, वह कब लिखी गई है। श्रवणबेलगुलके **ब्रह्मसूरिशास्त्री**के भंडारमें भी शायद उसकी एक प्रति है।

'उभयभाषाकविचक्रवर्ती' ने इसमें सन्देह नहीं कि, अनेक ग्रन्थोंकी रचना की होगी, परन्तु अभीतक उनके सिर्फ तीन ही ग्रन्थोंका पता लगा है, एक **महापुराण** जिसका ऊपर उल्लेख हो चुका है, दूसरा **नागकुमारचरित** और तीसरा **सज्जनचित्तवल्लभ** ये तीनों ग्रन्थ संस्कृतमें हैं, प्राकृतमें अभीतक आपका कोई भी ग्रन्थ प्राप्त नहीं हुआ है, परन्तु होगा अवश्य। क्योंकि आपने अपनेको संस्कृतके समान प्राकृतका भी कवि कहा है। प्रवचनसारटीका, पंचास्तिकायटीका, ज्वालिनीकल्प, पद्मावतीकल्प, वज्रपंचरविधान, ब्रह्मविद्या और आदिपुराण ये ग्रन्थ भी मल्लिषेणाचार्यके नामसे प्रसिद्ध हैं, परन्तु यह नहीं कहा जा सकता है कि, उनमेंसे उभयभाषाकविचक्रवर्तीके रचे हुए कौनसे हैं, और दूसरोंके कौनसे।

यह **नागकुमारचरित** छोटासा पंचसर्गात्मक ग्रन्थ है, और ५०७ श्लोकोंमें पूर्ण हो गया है। यद्यपि इस ग्रन्थमें कर्त्ताने अपनी प्रशस्ति नहीं दी है और प्रारंभमें एक जगह अपने मल्लिषेण नाम-

---

१ बाहूबलिनामके कविने इस चरितका अनुवाद कड़ानी भाषामें शक संवत् १५०७ में किया है।

के सिवाय कुछ भी नहीं लिखा है, तो भी प्रत्येक सर्गके अन्तमें **इत्युभयभाषाकविचक्रवर्त्तिश्रीमल्लिषेणसूरिविरचितायां श्रीनागकुमारपञ्चमीकथायां** इत्यादि लिखा हुआ है, जिससे जान पड़ता है कि, महापुराणके कर्त्ता मल्लिषेणने ही इसकी रचना की है। इस काव्यके प्रारंभमें लिखा है कि–

> **कविभिर्जयदेवाद्यैर्गद्यैर्पद्यैर्विनिर्मितम् ।**
> **यत्तदेवास्ति चेदत्र विषमं मन्दमेधसाम् ॥**
> **प्रसिद्धैः संस्कृतैर्वाक्यैर्विद्वज्जनमनोहरम् ।**
> **तन्मया पद्यबन्धेन मल्लिषेणेन रच्यते ॥**

इससे मालूम होता है कि, मल्लिषेणके पहले **जयदेव** नामक किसी कविका बनाया हुआ कोई नागकुमारकाव्य था, जो गद्यपद्यमय (चम्पू) था। परन्तु वह कठिन था, इसलिये मल्लिषेणने इसे सरल और प्रसिद्ध संस्कृतमें बनाना उचित समझा। यह चरित्र बहुत सरल है और साधारण संस्कृत पढ़े हुए इसे सहज ही समझ सकते हैं।

दूसरा **सज्जनचित्तवल्लभ** केवल २९ श्लोकोंका छोटासा काव्य है। इसमें मुनियोंको बहुत ही प्रभावशाली शब्दोंमें उपदेश किया है कि तुम अपने चरित्रको निर्मल रक्खो, ग्रामके समीप मत रहो, स्त्रियोंसे सम्बन्ध मत रक्खो, परिग्रह धनादिकी आकांक्षा मत करो, भिक्षामें जो लूखा सूखा भोजन मिले, उससे संतोषपूर्वक पेट भर लो, और इन्द्रियोंपर विजय प्राप्त करके अपने यति नामको सार्थक करो, इस छोटेसे ग्रन्थके पाठ करनेसे अनुमान होता है कि श्रीमल्लिषेणा-

चार्यको अपने समयके मुनियोंको शिथिलाचारमें प्रवृत्त देखकर बड़ी चोट लगी थी। उनके हृदयकी वह चोट सज्जनचित्तवल्लभके कई श्लोकोंसे स्पष्ट व्यक्त होती है। इसमें सन्देह नहीं कि, वे बड़े दृढ़व्रती और विरक्त मुनि होंगे, परन्तु उस समयके सब मुनि ऐसे नहीं होंगे। उनमें अवश्य ही शिथिलाचारकी प्रवृत्ति होने लगी होगी। भट्टारकोंकी उत्पत्ति भले ही बहुत पीछे हुई हो, परन्तु उनका बीज उनसे कई सौ वर्ष पहले हमारे मुनिसमाजमें पड़ चुका होगा।

दूसरे मल्लिषेण आचार्य जिनकी कि '**मलधारिन्**' पदवी थी और जिनका उल्लेख इस लेखके प्रारंभमे किया गया है, शाक संवत् १०५० की फाल्गुण कृष्ण तृतीयाको श्वेतसरोवरमें (श्रवण-बेलगुलमें) समाधिस्थ हुए थे, ऐसा मल्लिषेणप्रशास्तिसे[1] मालूम पड़ता है जो कि 'इन्स्क्रिप्शन्स एट् श्रवणबेलगोला, नामक अंग्रेजी पुस्तकमें प्रकाशित हो चुकी है। वे **अजितसेन** नामक आचार्यके शिष्य थे और बड़े भारी विद्वान् योगी और जितेन्द्रिय थे।

[जैनहितैषी अंक ७—८ भाग ७]

१ यह बड़ी भारी प्रशस्ति श्रवणबेलगोलाके पार्श्वनाथवस्ती नामके मन्दिरमें कई शिलाओंपर उकीरी हुई अब भी मौजूद है।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः

नागकुमार-चरित ।

पहला परिच्छेद ।

ग्रन्थकी आदिमें—सब जीवोंके कल्याण करनेवाले नेमिनाथ भगवानको नमस्कार करके नागकुमारका पवित्र चरित लिखता हूं । वह इसलिए कि इसके श्रवण पठनसे पापकर्मका नाश होता है और पुण्य संचित होता है ।

जयदेव आदि महा-कवियोंने नागकुमारका चरित लिखा है पर उसकी गद्यपद्यमय भाषा कठिन होनेसे मैं सरल, सुबोध और मुहाविरेमें आनेवाले छोटे छोटे वाक्योंमें इसे लिखूंगा । मुझे जहांतक विश्वास है, इससे बुद्धिमानोंका मनोरंजन भी होगा ।

जहां ऐरावत हाथी मौजूद हों वहां और साधारण हाथियोंकी कुछ गिनती नहीं होती, वे थोड़ेसे अपने बल वीर्य पराक्रमके द्वारा ही

खुश रहते हैं। पर बात यह है कि जिस आकाशमें गरुड उड़ता है उसमें मोर भी अपनी शक्तिके अनुसार उड़ा करते हैं। ठीक उसी तरह जिस मार्गका बड़े बड़े आचार्योंने अनुसरण किया है उसका मैं भी अपनी शक्तिके माफिक करूंगा। इतने कहनेका सार यह कि जिस कार्यका मैंने आरंभ किया है उसे अब मैं संक्षिप्तमें लिखता हूं।

जम्बूद्वीपके अन्तर्गत भारतवर्षमें मगध नामका देश है। मगधकी राजधानी राजगृही है। वह अच्छी सम्पत्ति शालिनी है। उसके राजा श्रेणिक हैं। वे सारे देशका पालन अच्छी तरह करते हैं। उनकी प्रियतमाका नाम चेलिनी है। उसके हृदयमे जिन भगवानकी अत्यंत भक्ति है। इसलिए कविने उसे भगवानके चरण कमलोंकी भ्रमरी करके लिखा है। रोहिणी जैसे लोगोंको आनन्द देती है वैसे उसे देखकर सबको आनन्द होता है। वह सीताकी तरह पतिव्रता है। इन्द्र जैसे अपनी प्रियतमा शचीके साथ सुख भोगता है उसी तरह श्रेणिक महारानी चेलिनीके साथ सुखपूर्वक दिन बिताते हैं।

एक दिन श्रेणिक राज्यसिंहासनपर बैठे हुए थे कि इतनेमें उनके किसी कर्मचारीने आकर निवेदन किया कि, महाराज! श्रीवीरभगवान विपुलाचलपर आये हैं। सुनकर श्रेणिक बड़े खुश हुए। उन्होंने भगवानके समाचार लानेवालेको अपने शरीरपरके सब भूषण वस्त्र इनाम दे दिये और सिंहासनसे सात पैंड आगे आकर भगवानकी वन्दना की।

इसके बाद यह आनन्द सूचना शहरमें भी दिलवाकर अपनी प्रियत-

माके साथ श्रेणिक, भगवानकी पूजन करनेको गये। विपुलाचलपर पहुँचकर श्रेणिकने भगवानको संमवसरणमें विराजे देखे, उन्होंने उनकी तीन प्रदक्षिणा की, नमस्कार किया और फिर अनेक तरहके अच्छे अच्छे गन्धपुष्पादि पवित्र द्रव्योंसे भगवानका पूजन किया। पश्चात् गौतम भगवानको वन्दना करके अपने योग्य जगहमें वे बैठ गये और धर्मोपदेश सुनने लगे। वहां उन्होंने गौतमस्वामीसे पूछा कि विभो! मुझे पञ्चमी व्रतकी कथा सुननेकी इच्छा है, आप कहें तो बडी दया हो। मनःपर्यय ज्ञानके धारक गौतमगणधरने श्रेणिकको इस तरह सुनाना आरंभ किया—

हे श्रेणिक! विद्वज्जनों पूर्ण मगधदेश बड़ा सुन्दर देश है। वह गन्ने आदि पदार्थोंके मनोहर खेतोंसे युक्त है। उसके चारों ओर अच्छे अच्छे बगीचे हैं। उन बगीचोंमें सब प्रकारके फल फूल बड़ी शोभा दे रहे हैं। देशकी श्री आस पासके छोटे छोटे गांव, खेट, पत्तन और मटंब आदिसे और भी बढ़ गई है।

इसी मगधदेशमें **कनकपुर** नामका एक सुन्दर नगर है। वह कुए सरोवर और बगीचे आदिसे शोभित है। सरोवरकी शोभा फूले हुये कमलोंसे बड़ी मनोहर जान पड़ती है। **कनकपुर** देशभरमें अच्छा प्रसिद्ध नगर है। उसमें बड़े बड़े धनवान, विलासी और सुखी लोग रहते हैं। इन सब सुख—सामग्री, सौन्दर्य और सजधजसे कनकपुरको स्वर्गकी उपमा दी जा सकती है।

कनकपुरके राजाका नाम **जयंधर** था। उसने अपने शत्रुओंको जीत लिए थे। वह प्रभुत्व मंत्र और कोष इन तीनों प्रकारकी शक्तियों तथा मंत्री, मित्र, खजाना, देश, दुर्ग बल आदि

सात अंगोंसे युक्त था। काम, क्रोध, मान, लोभ, हर्ष तथा गर्व ये छह राजाओंके अन्तरंग शत्रु हैं। **जयंधरने** इन्हें भी जीत लिये थे। जयंधर परस्त्रियोंके लिए अन्धा था, खोटे कामोंके करनेमें आलसी था, दूसरोंकी निन्दा करनेमें गूंगा था और जीवोंकी हिंसा करनेमें पंगु—अपाहिज—था। अर्थात् **जयंधर** न कभी पर स्त्रियोंके साथ रमण करता था, न कभी बुरे काम करता था, न दूसरोंकी निन्दा करता था और न कभी जीवोंकी हिंसा करता था। उसकी प्रियतमाका नाम **विशाललोचना** था। उसकी चालको देखकर हंसतक शर्मा जाते थे। उसकी बानी बड़ी सीधी और मधुर थी।

उनके **श्रीधर** नामका सुन्दर पुत्र था। वह सब कलाओंका जाननेवाला था, सत्यवादी था, निर्लोभी था। उसमे और भी अच्छे अच्छे गुण थे।

जयंधरका एक मंत्री था। उसका नाम था **नयंधर**। वह नीतिशास्त्रका अच्छा जाननेवाला था। अपने स्वामीका आदर्श भक्त था। सबके साथ प्रिय—भाषण करता था। कहनेका अभिप्राय यह कि एक राज मंत्रीमें जितने गुण होने चाहिए उसमे वे सब थे।

एक दिनकी बात है कि जयंधर अपने राजमहलमें बैठा हुआ था, इतनेमें एक सेठ रत्नजड़ित एक सुन्दर चित्रपट लेकर उसके पास आया और उसे अभिवादन कर उसके सामने वह बहु मूल्य चित्रपट उसने रख दिया। राजाने उसे पान सुपारी देकर पूछा—तुम इतने दिन कहां रहे? उत्तरमें **वासवसेनने** कहा—महाराज! मै इतने दिनोंसे लाट देशमें था। अभी वहींसे चला आ रहा हूं।

जयंधर उससे कुछ और भी पूछना चाहता था कि उसकी दृष्टि उस चित्रपटपर जा पड़ी, जो उसकी आंखोके सामने रक्खा हुआ था। उसने देखते ही चित्रपटको अपने हाथमें उठा लिया। उसमें एक सुन्दरीकी भुवनमोहिनी प्रतिमा अंकित थी। उसे देखते ही राजा उसपर मुग्ध हो गया। उसकी हालत एक लिखे हुए चित्रकी तरह हो गई। उस समय वहां जितने राज कर्मचारी आदि बैठे हुए थे, राजाने उन सबको अपने अपने स्थानपर जानेको कह दिया। जब वे सब चले गये तब राजाने बड़े आदरके साथ वासवसेनका हाथ पकड़कर एकान्तमें पूछा कि—कहो, तो यह चित्र किसका है? क्या यह नागकुमारीकी मूर्ति है? या गन्धर्वबालाकी? या किसी विद्याधर—कन्याकी? वासवसेन बोला—महाराज! **सुराष्ट्र** देशमें **गिरिनगर** नामका एक सुन्दर शहर है। उसके राजाका नाम है **श्रीवर्मा** और उसकी प्राणप्यारीका नाम **श्रीमती** है। उसके एक पुत्र और पुत्री है। उनके नाम क्रमसे **हरिवर्मा** और **पृथ्वीदेवी** है। **पृथ्वीदेवी हरिवर्मा**से छोटी है। उसीका यह चित्रपट लिखकर मैं आपके पास लाया हूं। सुनकर जयंधरने वासवसेनको उसके साथ अपना विवाह सम्बन्ध ठीक करनेके लिए भेजा। उसके साथ अपने विश्वासपात्र और भी बहुतसे नौकरोंको भेंट देकर भेजे। वे सब **श्रीवर्मा**के पास पहुँचे। जयंधरने श्रीवर्माके लिए जो उपहार भेजा था उसे उन्होंने उसके सामने समर्पण कर दिया। भेंट स्वीकार कर श्रीवर्माने उन्हें उचित पारितोषिक दिया और पूछा कि कहो इतनी दूरसे किस लिए यहां आये हो? जो कुछ कारण हो उसे कहो यदि वह मेरे करने योग्य होगा तो मैं अवश्य उसे पूरा करूंगा।

सुनकर वासवसेन बोला—महाराज ! कनकपुरके महाराज जयंधर आपकी राजकुमारीको अपनी प्रियतमा बनाना चाहते हैं । वे अच्छे सुरूपवान तथा विद्वान् हैं । उन्होंने हमें इस सम्बन्धके ठीक करनेको भेजा है । श्रीवर्माने उत्तरमें कहा सोने और मणिका यह संयोग मुझे स्वीकार है । भला कौन ऐसा अभागा है जो ऐसे उत्तम सम्बंधको स्वीकार न करेगा । श्रीवर्माने उसी वक्त ज्योतिषियोंको बुलवाकर मुहूर्त दिखवाया और अपने जातीय रिवाजके माफिक उनके साथ पालखी भेजदी । उसके साथ और बहुतसे अपने विश्वस्त पुरुषोंकोभी उसने भेजे । जब वे जयंधरके पास पहुँचे तब उनका उसने भी अच्छा आदर सम्मान कर पालखीके साथ उन्हें वापिस भेज दिये । साथमें वासवसेनको भी भेजा । श्रीवर्मा उनका आना सुनकर उनके सम्मुख गया और बड़े उत्सवके साथ पालखीमें राजकुमारीको बैठाकर उसे उसने खूब रत्न, धन, भूषण, वसन, ग्राम आदि दिया और इसके बाद बोला—पुत्रि ! तूं महाराज जयंधरकी प्रधान प्रिया हो, पुत्रवती हो, महाराजकी अनुगामिनी हो, इस प्रकार माता पिताने शुभाशीर्वाद देकर उसे विदा किया । उसके साथ साथ कुछ दूरतक वे स्वयं भी गये ।

जयंधर राजकुमारीका आगमन सुनकर बहुत खुश हुआ । राजकुमारीके प्रवेशोत्सव करनेके लिए सारे शहरमें उसने यह आज्ञा प्रचारित करदी कि प्रत्येक घर घरमें उत्सव मनाया जाय और ध्वजा कलशादिसे वे अच्छे सजाये जायँ । उधर स्वयं जयंधर राजकुमारीके लिवानेके लिए बड़े उत्सवके साथ उसके सामने गया और उसे बड़े आदरसत्कारसे लाकर एक अच्छे महलमें ठहराई । फिर अच्छा दिन देखकर अग्निसाक्षीसे उसके साथ उसने विवाह

कर लिया। पृथ्वीदेवीके अतिरिक्त जयंधरकी और भी बहुत स्त्रियां थी। जयंधरकी इच्छा पूरी हुई। वह सुखसे समय बिताने लगा।

एक दिन मालीने आकर जयंधरसे प्रार्थना की कि महाराज! वसन्तऋतुका आगमन हो गया। बन, उपवनमें वृक्ष लताएं फल फूलने लगीं। मुझे आज्ञा कीजिए आप कब उस स्थानको सुशोभित करेंगे? मैं सब तरहकी तैयारी कर रक्खूं। जयंधरने अपना आनेका समय बतलाकर उसे भेज दिया। इधर आप अपनी प्रियतमाके साथ बनविहारके लिए रवाना हुआ। उसके पीछे ही जयंधरकी प्रधान रानी विशाललोचना हाथीपर चढ़कर अपनी प्रिय सखी सहेलियोंको साथ लेकर चली। उस समय पृथ्वीदेवी भी अपनी सोनेकी पालखीमें बैठकर हाथीपर चढ़ी बड़े बाजे गाजेके साथ बन विहारके लिए जा रही थी। उसकी पालखीको दूरसे देखकर विशाललोचनाने पूछा कि वह पालखी किसकी है? उत्तरमें एक सखीने कहा कि तुम नहीं जानती वह महाराजकी अतिशय प्यारी और तुम्हारी भगिनी है। वह बड़ी सुन्दरी है। बहुत दिन हुए जब उसे मैंने देखी थी। आज वन विहारके बहानेसे उसकी रूप मधुरिमाका मुझे फिर भी दर्शन होगा।

इधर जब पृथ्वीदेवीने अपने हाथीकी गति रुकी हुई देखी तब पूछा कि रास्तेमें किसने हाथी रोक दिया है? उत्तरमें किसी परिचारिकाने कहा कि देवी! महाराजकी प्रधान रानीकी सवारी आगे खड़ी हुई है। जान पड़ता है आपका आना जानकर वे खड़ी रह गई हैं। पृथ्वीदेवीने सोचा कि वे मुझसे अपना विनय करवाना चाहती हैं। वह तो इतना विचारही रही थी कि विशाललोचनाका एक साथ मिजाज

विगड़ गया । वह क्रोधित होकर बोली कि इसे तीन दिन तो महाराजकी कृपा पात्री बने हुए और अभीसे इतना अभिमान जो मेर विनय तक नहीं करती ? तब देखूंगी इसके अभिमानको जब इसके पुत्र होगा । यह कहती हुई वह वनको चली गई ।

बिना कारणके इस प्रकार क्रोधित होकर विशालनेत्राके चले जानेपर बेचारी पृथ्वीदेवीको बड़ा रंज हुआ । वह अपने भाग्यको दोष देती हुई बोली—सच है सोतकी ईर्षा बड़ी बुरी होती है । भले ही उसका कितना ही आदर सम्मान करो, पर वह अपने स्वभावको नहीं छोड़ती । यह तो मैं आखोंसे देख चुकी हूं कि मैं महारानीको कितनी चाहती थी, उनका हृदयमें कितना आदर करती थी तब भी वे मुझसे बिना कारणके नाराज होकर चली गई । विशाललोचनाके इस तरह चले जानेसे पृथ्वीदेवी बड़ी दुखी हुई । उस दुःखके मारे उसे वनका जाना भी अच्छा न लगा । वह अपना चित्त शान्त करनेके लिए वनमें न जाकर सीधी जिनमन्दिरमें चली गई । वहां उसने भगवान का पूजन किया और पिहिताश्रव मुनिको नमस्कार कर उनसे उसने पूछा कि भगवन् ! मुझे पवित्र धर्मका उपदेश कीजिये, जो जन्म, जरा और मृत्युके अपार दुःखका नाश करनेवाला, पापका छेदन करनेवाला और सुखका कारण है ।

मुनिराजने यों कहना आरंभ किया—

धर्मके दो भेद हैं । यतिधर्म और गृहस्थधर्म । इनमें यतिधर्म उत्तमक्षमा, उत्तममार्दव, उत्तमआर्जव, उत्तमशौच, उत्तमसत्य, उत्तमसंयम, उत्तमतप, उत्तमत्याग, उत्तमआकिंचन और उत्तमब्रह्मचर्य आदि दश धर्मरूप है । पुत्रि ! इन क्षमादिके साथ जो उत्तम

शब्द लगा है उसका मतलब यह है कि कारणोंके मिलनेपर भी चित्तमें किसी तरहका विकार न हो। जैसे कल्पना करो कि एक मुनिको निर्बल पुरुष बहुत कुछ कष्ट पहुंचा रहा है; वे उसका प्रतिकार भी कर सकते हैं, पर आत्माका स्वभाव अपनेमें स्थिर रहनेका है। इसलिए वे किसीपर राग द्वेष न करके शान्तिके साथ दूसरों कृत उपद्रव सह लेते हैं। क्योंकि राग द्वेषसे नवीन कर्मोंका बन्ध होता है और उससे संसारमें भ्रमण करना पड़ता है।

गृहस्थधर्मके दान, पूजन, शील और प्रोषध ऐसे चार भेद हैं। इनमें पहला दान है, इसके आचार्योंने चार भेद किए हैं।

दानका विशेष आगे लिखा है।

पुत्रि! एक बात और इसमें समझनेकी है। देख, दान जब दिया जाय तब यह बात अच्छी तरह जान लेनी चाहिए कि जिसे दान दिया जाता है वह पात्र है या नहीं। क्योंकि दानके लेनेवाले भी दो हैं। पात्र और अपात्र। इनमें पात्रके तीन भेद हैं—उत्तमपात्र, मध्यमपात्र और जघन्यपात्र। उत्तमपात्र वह कहलाता है जो निरन्तर अपना समय स्वाध्याय वा ध्यानमें व्यतीत करता हो, पञ्च महाव्रत, अट्ठाईस मूलगुणोंका पालक हो और जिसमें क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष आदि न हों। मध्यमपात्र उसे कहते हैं जो स्व-स्त्री—सन्तोषव्रतका धारक हो, पञ्चाणुव्रतका पालन करनेवाला हो, सम्यग्दृष्टि हो, और गुरुका भक्त हो। जघन्यपात्र वह है जो व्रत रहित होकर भी सम्यक्त्वी और जिन धर्मपर पूर्ण श्रद्धा रखनेवाला हो।

अपात्र वह कहा जाता है—जो सम्यक्त्वी न होकर देव, गुरु,

धर्मकी निन्दा करनेवाला हो, ऐसे अपात्रोंको दान देनेसे कुछ लाभ न होकर उल्टा हानि होती है। पुत्रि! देख, जैसे ऊषर भूमिमें बीज बोनेसे कुछ लाभ नहीं होता वैसे अपात्रोंमें दिया हुआ अन्न निष्फल जाता है। जैसे एक ही कूएका जल नींम और सांठेमें पहुँचता है पर उसका उपयोग भिन्न भिन्न रूपमें होता है—एकमें कटुक और एकमें मधुर। ठीक इसी तरह पात्र और अपात्रोंमें दिये हुए दानकी गति होती है। जैसे पवित्र पात्रमें घी दूध आदि पदार्थ नहीं बिगड़ते हैं पर वे ही किसी खराब पात्रमें यदि रख दिए जायँ तो बिगड़ जाते हैं, वैसे ही अपात्रमें दिया हुआ दान नष्ट होता है। जैसे एक ही कूएका पानी गाय पीती है और सर्प भी, पर गायका पिया हुआ तो वह दूधरूपमें परिणत होता है और सर्पका पिया हुआ विषरूपमें। वैसे ही पात्र और अपात्रोंमें दिए हुए दानका परिणमन होता है। जैसे बड़का बीज छोटा होता है पर उसे अच्छे स्थानमें बोनेसे बहुत बड़े वृक्षके रूपमें उसका परिणमन होता है वैसे ही सुपात्रोंको दिया हुआ थोड़ासा दान भी बहुत फलका देनेवाला होता है।

दान—प्रतिग्रह, उच्चस्थान, पादप्रक्षालन, पूजन, नमस्कार, मनशुद्धि वचनशुद्धि कायशुद्धि, और अन्नशुद्धि इन नवधाभक्ति पूर्वक देना चाहिए। हां एक बात और भी ध्यानमें रखनी चाहिए। वह यह कि उस समय दातामें नीचे लिखे हुए सात गुणोंका होना आवश्यक है।

श्रद्धा—मेरा आज बड़ा ही सुभाग्यका उदय है जो मुझे ऐसे

पवित्र पात्रको दान देनेका समय मिला। मैं आज बड़ा ही भाग्यवान हुआ।

भक्ति—पात्रके समीप रहकर उसके चरणोंकी सेवा करना।

अलोभीपना—दान देते समय यह ख्याल कभी ध्यानमें न रखना चाहिए कि पात्रसे मेरा कुछ मतलब सधेगा, इस लिए मैं इसे दान देता हूं।

दयालुता—किसी कार्यके लिए घरमें इधर उधर जाना हो तो बहुत सावधानीसे देखकर चलना।

शक्ति—यह बहुत खानेवाला है, कहीं सब आहार न कर जाय। ऐसी अशक्ति न दिखलाना।

क्षमता—दानके समय स्त्री पुत्रादि द्वारा यदि कुछ अपराध भी बन पड़े तो भी उनपर कुछ क्रोध न करना।

विज्ञता—पात्र या अपात्र आ जाय तो उनके गुण दोषोंका ठीक ठीक जान लेना।

पुत्रि ! पात्र दानका फल ऋषियोंने स्वर्गसुखकी प्राप्ति होना बतलाया है। जो स्वर्गमें जाते हैं वे वहां स्वर्गकन्याओंके साथ निरन्तर सुख भोगा करते हैं। उन्हें रोग, शोक, आदि किसी प्रकारका दुःख नहीं होता। वे मृत्युपर्यंत निरोग रहते हैं। सत्पात्रोंको दान देनेसे न केवल सम्यग्दृष्टि ही सुखी होते हैं किन्तु मिथ्यादृष्टि भी भक्तिपूर्वक दान देनेसे भोगभूमिमें उत्पन्न होता है। पर अपात्रदान तो सदा बुरा है। उसका फल कुगति होता है।

पुत्रि ! दानके सम्बन्धमें इतना और ध्यानमें रखना चाहिए कि बहुतसे लोग सुवर्ण, गाय, कन्या आदिका दान देना अच्छा बत-

लाते हैं, पर बुद्धिमानोंको उक्त वस्तुएं दान न करनी चाहिएँ। क्योंकि इनका देना लोगोंको दुःखका कारण है। सुवर्ण प्राप्त होनेसे उसके रक्षा करनेकी पात्रको चिन्ता हो जाती है, पृथ्वीदानके निमित्तसे उसमें खेती आदि करनेसे जीवोंकी हिंसा होती है, गाय दानसे उसके बांधने, मारने आदिमें उसे कष्ट पहुँ-चता है और कन्यादानसे राग उत्पन्न होता है, रागसे कर्मबन्ध होता है और कर्मबन्धसे अनन्त संसारकी वृद्धि होती है। इसलिए ये सभी दान दुःखके कारण होनेसे देने योग्य नहीं है। दूसरे यह भी बात है कि इन सुवर्ण आदिके दानसे कभी तृप्ति नहीं होती है। जैसे ईंधनसे अग्निकी और नदियोंसे समुद्रकी। इसलिए भी ये देने योग्य नहीं।

पुत्रि! सब दानोंमें अन्नदान बड़ा उत्तम है। क्योंकि उससे शरीरका सन्ताप नष्ट होता है और वह जीवन बनाये रखता है। देख, जो मनुष्य अच्छी तरह आहार कर लेता है उसके सामने फिर स्वर्गीय अन्न भी क्यों न आये उसमें उसकी कभी इच्छा तक नहीं होती।

पुत्रि! यदि तूं दान देनेकी इच्छा करती है तो तुझे अभयदान भी देना चाहिए। क्योंकि इससे सबको बड़ा आनन्द होता है। आचार्योंने इसे संसारका नाश करनेवाला बतलाया है। जो लोग मरनेसे डरते हैं उनके प्राणोंकी इसके द्वारा रक्षा होती है। वह निर्भय हो जाता है और निर्भय होनेपर वह धर्मसाधन अच्छी तरह करने लगता है। इसलिए फिर वह कुगतिमें भी नहीं जाता।

जो लोग रोगी होते हैं उनका शरीर बिगड़ जाता है और

शरीरके बिगड़ जानेपर फिर वे तपश्चर्या नहीं कर सकते और तपके अभावमें मोक्षसुख प्राप्त नहीं हो सकता। इसलिए रोगी पात्रोंके लिए औषधदान देना चाहिए। इस दानके फलसे दाता निरोग और रूपवान् होता है।

ज्ञानदान—पुत्रि! इसीको विद्यादान भी कहते हैं। देख, सबसे बड़ा इस दानका महात्म्य है। क्योंकि जो अज्ञानी हैं, जो पवित्र धर्ममार्गसे च्युत होकर संसारमें भटक रहे हैं ऐसे पुरुषोंके हितके लिए उन्हें ज्ञानदान देकर उनका भला करना बड़ा ही पुण्यका काम है। इसके लिए शहरों और गावोंमें पाठशालाएं खुलवानी चाहिए और जो पहलेसे हैं उनकी सहायता करनी चाहिए। जिनके पास पढ़नेको पुस्तकादि न हो उन्हें पुस्तक वगैरह देना चाहिए। ज्ञानदानके फलसे केवलज्ञानी होकर मोक्षमें जाता है।

पूजन—

जिन भगवान्की प्रतिमाएं बनवाकर जो भव्यपुरुष उनका इक्षु, आम आदिके रससे अभिषेक करते हैं और प्रतिदिन अष्ट द्रव्योंसे उनकी पूजन करते हैं वे स्वर्गमें जाकर देवोंसे पूज्य होते हैं।

शील—

शील उसे कहते है जिसमें अपने उत्तम व्रतोंकी रक्षा की जाय। शीलका पालन करनेसे सुगति प्राप्त होती है, दुर्गति नष्ट होती है, शील—कीर्तिके प्राप्त करनेका स्थान है, शील—शरीरका प्रधान भूषण है, शीलवान् पुरुषका सब सत्कार करते हैं। वह सबमें श्रेष्ठ माना जाता है.

प्रोषध—

पुण्यप्राप्तिके लिए देशव्रतीको अष्टमी चतुर्दशी आदि पर्व तिथि-

योंमें उपवास करना चाहिए। उपवास करनेसे पूर्वके पापकर्म सब नष्ट हो जाते हैं और परम्परा अक्षयपद–मोक्षकी–प्राप्ति होती है। पर उपवास मन बचन कायकी शुद्धिसे किया जाना चाहिए। जैसा कि ऋषियोंने उसके करनेका उपदेश दिया है।

पिहिताश्रवमुनिने उक्त प्रकार जो धर्मोपदेश दिया उसे पृथ्वी-देवीने बड़ी रुचिके साथ सुना। धर्मोपदेश सुननेसे उसे बड़ा वैराग्य हुआ। उसने मुनिराजसे दीक्षा लेनेकी प्रार्थना की। पर मुनि बोले कि अभी तेरे पुत्र होगा इसलिए तुझे दीक्षा लेना उचित नहीं। मुनिके वचनोंसे उसे बड़ा संतोष हुआ। वह उन्हें नमस्कार कर अपने महलको चली गई और वहां आनन्दसे रहने लगी।

दूसरा परिच्छेद ।

जयंधर वनविहार करके अकेला राजमहल लौट आया । जब पृथ्वीदेवी आई तब उससे जयंधरने वनविहारके लिए न आनेका कारण पूछा । वह बोली कि महाराज ! मैं जिनमन्दिर चली गई थी । वहां मुनिराज धर्मका पवित्र उपदेश दे रहे थे । मैं भी उसे सुननेके लिए बैठ गई थी । इसलिए मैं न आ सकी । रानीने वह उपदेश भी राजाको सुनाया जिसे वह सुनकर आई थी ।

रानीका समय सुखपूर्वक बीता । एक दिन वह अपने महलमें सोई थी । उसने उस समय दो स्वप्न देखे । एकमें तो उसने एक सुन्दर बैलको अपने घरमें घुसते देखा और दूसरेमें उदित होते हुए बालसूर्यको देखा ।

प्रातःकाल हुआ । बाजोंकी सुन्दर और मधुर ध्वनि रानीके कानोंमें सुन पड़ी । वह उठी और नित्यक्रिया करके महाराजके पास पहुंची । महाराजसे उसने रातमें देखे हुए स्वप्नोंका हाल कहा । उत्तरमें जयंधरने कहा कि, प्रिये ! अपन जिनमन्दिर चलें । वहां मुनिराज हैं । उन्हींसे स्वप्नका फल पूछेंगे । ऐसा कहकर वह रानीके साथ जिनमन्दिर गया । वहां भगवान्‌की वन्दना स्तुति करके वह मुनिके पास पहुँचा और नमस्कारकर उसने उन्हें स्वप्न कह सुनाये । मुनिने उनका फल कहा कि जो स्वप्नमें बेल देखा है उससे सूचित होता है कि

तुम्हें पुत्ररत्नकी प्राप्ति होगी और सूर्यका देखना प्रगट करता है कि वह नियमसे केवलज्ञानी होगा।

राजाको पुत्रकी बात सुनकर बड़ी खुशी हुई। उसने मुनिसे फिर पूछा कि भगवन्! मैं यह कैसे जान सकूंगा कि मेरा पुत्र ऐसा तेजस्वी होगा। उत्तरमें मुनिने कहा कि देखो, तुम्हारे बगीचेमें एक सिद्धकूट जिनालय है। उसमें देवतालोग सदा पूजनादि किया करते हैं। उसका बाहिरका दरवाजा बहुत समयसे बन्द पड़ा है। वह किसीसे नहीं खुलता। उसे खोलनेके लिए तुम्हारे पुत्रकी चरणरूपी कूंची (ताली) ही समर्थ होगी। इसके अतिरिक्त और भी कई बातें हैं जो तुम्हारे पुत्रको पराक्रमी सिद्ध कर सकेंगी।

जैसे कि उसी जिनालयके पास एक बावड़ी है। उसमें बहुतसे सर्प रहते हैं। तुम्हारा पुत्र खेलता खेलता उसमें गिर पड़ेगा वहां उसे सर्प न काटकर उसकी रक्षा करेंगे। वह एक निलगिरी नामके उन्मत्त हाथीको और एक दुष्ट घोड़ेको भी अपने पराक्रमके जोरसे वश करेगा। इत्यादि बहुतसे चिन्होंसे तुम अपने पुत्रका परिचय पा सकोगे। मुनिके बचन सुनकर राजाको बड़ा सन्तोष हुआ। वह उन्हें नमस्कार कर जिन मन्दिरमें आया और भगवानकी स्तुति करके राजमहल लौट आया।

कुछ दिनोंके बाद मृगलोचनी पृथ्वीदेवीके गर्भ रहा। उसे दोहद उत्पन्न होने लगे। उसकी इच्छा मिट्टीके खानेकी हुई। इसके बाद ही उसपर नफरत आकर जैसे उलटी होनेकासा उसे भान हुआ। इससे जान पड़ता है कि उसका पुत्र पृथ्वीका अधिपति और शुद्ध सम्यग्दृष्टि होगा। उसके त्रिवलीके भंगसे जान पड़ता है कि वह इसी

भवमें जन्म, मरण और जराका नाश करेगा—अर्थात् मोक्ष जायगा।

कुछ दिनोंके बाद पुत्र हुआ। राजाने पुत्रकी खुशीमें खूब उत्सव कराया, अनाथ, अपाहिज, गरीबोंको दान दिया, बन्धु लोगोंको खूब सम्मानित किये।

बालकका नाम संस्करण किया गया। **प्रतापंधर** उसका नाम रक्खा गया। वह दिनों दिन सुदी द्वितीयाके चन्द्रकी तरह बढ़ने लगा।

एक दिनकी बात है कि प्रतापंधरकी धाय उसे खेलानेके लिए बगीचेमें ले गई। वहां जिस मन्दिरका द्वार बन्द था उसके बालकका पांव लग जानेसे वह खुल पड़ा। वह बालकको मन्दिरमें ले गई। उसने वहां भगवानके दर्शन किये।

बालक मन्दिरमें खेलने लगा। खेलते खेलते वह बाहर आ गया। पास ही नागबावड़ी थी। बालक स्वाभाविक बाल चपलतासे खेलता हुआ बावड़ीमें गिर पड़ा। उसमें बहुतसे जहरीले सर्प रहते थे। वह गिरा तो सही पर उसका पुण्य—प्रताप बहुत चढ़ा बढ़ा था। इसालिये सर्पोंने उसे न काटकर उसकी रक्षाकी—उसे अपने सिरपर उठा लिया।

उधर धाय पूजनोत्सव देखकर जब बाहर आई और उसने बालकको वहां न पाया तब उसे बड़ी चिन्ता हुई। उसने बावड़ीमें झांककर देखा। देखते ही उसकी छाती दहल गई। वह रोती हुई दौड़ी गई और बालकके बावड़ीमें गिर जानेका हाल महारानीसे उसने कह सुनाया। महारानी सुनते ही दौड़ी आई और आगा पीछा कुछ न सोचकर पुत्रप्रेमसे बावड़ीमें जा कूदी। अहा!

धन्य इस पुत्रप्रेमको जिसके लिए माता अपना जीवन भी तुच्छ समझती है। यह प्रेम मातामें ही होता है।

वह वहांकी लीला देखकर चकित हो रही। जल घुटने प्रमाण हो गया। बालक बड़ी निर्भयताके साथ सर्पोंसे खेल रहा है। तब उसे जान पड़ा कि मेरा पुत्र बड़ा प्रतापी है।

पुत्रके गिरनेकी खबर राजाके पास भी पहुँची। वह उसी समय वहां दौड़ा आया। पर वह जबतक वहां पहुँचा उसके पहले ही पुत्र और उसकी मा बावड़ीमेंसे निकल आई थी। राजा पुत्रको अक्षत शरीर देखकर बड़ा खुश हुआ। वह उसी समय अपनी प्रियाको लेकर जिनालयमें पहुँचा। वहां उसने जिन भगवानकी पूजा, स्तुति की और बड़ी खुशी मनाई। उसने सर्पों द्वारा अपने पुत्रका इस प्रकार सम्मान देखकर उसका दूसरा नाम नागकुमार रक्खा। इसके बाद वह अपनी प्रियाके साथ राज महल पहुँचा। मुनिके बचनोंको याद कर उसे बड़ी प्रसन्नता हुई।

जब **नागकुमार** पांच वर्षका हुआ तब वह जैनगुरुके पास पढ़नेके लिए भेजा गया। उसकी बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी। वह थोड़े ही समयमें न्याय, साहित्य, सिद्धान्त, विज्ञान, गणित, ज्योतिष, अलंकार, और चित्रविद्याका अच्छा नामी विद्वान् हो गया। उसके पाण्डित्यकी देश विदेशमें खूब तारीफ की जाने लगी।

नागकुमारकी प्रसिद्धि सुनकर एक दिन पञ्चसुगन्धिनी नामकी वैश्याने राजसभामें आकर राजासे कहा कि महाराज! मेरे दो पुत्रियां हैं। एकका नाम **किन्नरी** और दूसरीका नाम **मनोहरी** है। वे दोनों बड़ी रूपवती हैं। उन्हें अपनी सुन्दरताका बड़ा अभिमान है।

वे बीन बजाना खूब अच्छा जानती हैं । मुझे उनका विवाह करना है। पर उसमें उनकी शर्त यह है कि वे जिस समय बीन बजानेको रंगभूमिमें उतरें उस वक्त परीक्षा करके जो यह बात बतला देगा कि दोनोंमें छोटी अमुक है, उसीके साथ वे अपना विवाह करेंगी। नहीं तो वे दोनों ही तपस्विनी हो जायँगी । मैंने राजकुमारकी बड़ी तारीफ सुनी है। वे सब विषयोंके अच्छे पंडित हैं। तब आप उन्हें मेरी पुत्रियोंकी परीक्षाके लिए नियत कीजिए। वेश्याके कहे अनुसार राजाने कौतुकाक्रान्त हो पुत्रसे कहा कि—कुमार! दिखलाओ अपना पाण्डित्य । महाराजकी आज्ञा होते ही दोनों बालिका राजसभामें बुलवाई गईं। वे रंगभूमिमें उतरीं । बीन बजने लगा। दोनों अपना अपना कलाकौशल्य दिखलाने लगीं । दोनों दीखनेमें एकसी दीखती थीं । सर्व साधारण यहांतक कि राजा भी इस विषयमें बड़ा ही व्यग्र था कि देखें कुमार कैसे इनकी परीक्षा करता है।

कुमारने उन दोनोंको बीन बजाते समय बड़े ध्यानसे देखा। उनकी चाल ढाल देखी। उनके हाव भावोंका बड़ी सूक्ष्मतासे निरीक्षण किया। उसने थोड़ी ही देरमें अपने मनमें निश्चय कर राजासे कहा कि—पूज्यपाद! मैंने जहांतक परीक्षा की, मुझे जान पड़ा कि इन दोनोंमे छोटी बहन किन्नरी है। सुनकर राजाको बड़ा आश्चर्य हुआ । उसने फिर कुमारसे पूछा—तुमने यह कैसे जान पाया कि किन्नरी छोटी है? इसके लिए प्रमाण क्या है? जिससे ऐसा निश्चय किया जा सके। कुमार बोला—पूज्य! बीन बजाते समय

मनोहरी जब किन्नरीकी और आंख उठाकर देखती थी तब किन्नरी नीची निगाह कर लिया करती थी। इसीसे मैंने जान पाया कि किन्नरी छोटी है। पुत्रकी परीक्षा देखकर राजा बड़ा खुश हुआ।

नागकुमारकी विद्वत्ता देखकर पंच सुगन्धिनीको बहुत आश्चर्य हुआ। उसने अपनी पुत्रियोंका अभिप्राय जानकर कुमारके साथ दोनोंका विवाह कर दिया। नागकुमार उनके साथ सुखसे समय बिताने लगा।

एक दिन महाराज राजसभामें बैठे हुए थे कि इतनेमें एक पुरुषने आकर प्रार्थना की—महाराज! एक हाथी मत्त होकर शहरमें घूम रहा है। सब लोगोंको उससे बड़ा त्रास हो रहा है। कितने ही मनुष्योंको उसने हताहत भी कर डाले हैं। आप उसके पकड़वानेका प्रबन्ध जल्दी कराइए। बड़ी हानि हो रही है। राजाने सुनते ही अपने श्रीधर नामक पुत्रको आज्ञा की कि तुम जाकर जल्दी उसके पकड़नेका प्रबन्ध करो। महाराजकी आज्ञा सुनते ही वह उसी समय वहांसे उठकर हाथीके पकड़नेके लिए चला गया। पर जब उसने हाथीकी भयंकर सूरत देखी तो उसके छक्के छूट गये। वह उसे देखते ही भाग खड़ा हुआ और महाराजके पास आकर बड़े भयके साथ बोला कि हाथी तो बड़ा उन्मत्त हो रहा है। उसका पकड़ा जाना असंभव है। पुत्रकी इस प्रकार भीरुता देखकर उन्होंने उसी वक्त नागकुमारसे कहा कि पुत्र जाओ तो एक मत्त हाथी लोगोंको बड़ा कष्ट दे रहा है उसे किसी तरह पकड़कर अपने वश करो। वह पिताकी आज्ञासे वहां आया, जहां वह हाथी लोगोंको तकलीफ पहुंचा रहा था।

उसने अपनी बुद्धिकी कुशलतासे हाथीको उसी वक्त पकड़ लिया और फिर उसीपर चढ़ कर वह महाराजके पास आया। उसने महाराजसे बड़े विनयसे प्रार्थना की कि यह हाथी आपकी सेवामें उपस्थित है। यह आपके योग्य है। इसे आप स्वीकार कीजिए। महाराज पुत्रकी इस विनयशीलतासे बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने पुत्रसे कहा कि—पुत्र ! तुमने इसे वश किया है। इसलिए यह तुम्हारे ही योग्य है। तुम्हीं इसे अपने काम लाओ। पिताकी आज्ञासे वह हाथीको लेकर अपने महल चला गया।

एक दिन नागकुमारने रास्तेमें जाते वक्त देखा कि एक घोड़ेका सईस अपने घोड़ेको किसी यंत्रसे चारा खिला रहा है। उसने उससे पूछा कि इसे यंत्रसे घास क्यों खिलाया जाता है ? सईसने कहा—कुमार ! यह बड़ा दुष्ट हो गया है। जो इसके पास जाता उसे लातें मारता है और काटने दौड़ता है। इसलिए यंत्र द्वारा चारा खिलाया जाता है। सुनते ही कुमारने घोड़ेको बन्धनसे मुक्त कर दिया और उसपर चढ़कर उसे इधर उधर घुमाया। बाद वह उसे महाराजके पास लिवा ले गया। महाराजसे उसने प्रार्थना की कि प्रभो ! यह घोड़ा बड़ा ही उद्धत हो रहा था। मैं इसे पकड़ कर आपकी सेवामें ले आया हूं। आप इसे स्वीकार कीजिए। राजाने बड़ी प्रसन्नतासे वह उसे ही दे दिया। वह घोड़ेको अपने स्थानपर ले गया और सुखसे रहने लगा।

एक दिन श्रीधरकी माता विशालनेत्राने अपने पुत्रसे कहा—पुत्र ! यह तो कह कि तुझे भी कोई देश विदेशमें जानता है क्या ? क्या कोई तेरा नाम भी लेता है ? देख तो तेरी सोतेली मांके पुत्रकी सब

जगह कितनी प्रतिष्ठा है? सब देश और विदेशमें नागकुमारहीकी तारीफ की जाती है। मुझे बड़ा दुःख है कि तुझमें कुछ कर्तव्य-शीलता नहीं। तूं भी तो एक राजपुत्र है, फिर क्यों नहीं प्रतिष्ठा प्राप्त करनेका उपाय करता है? जरा विचार तो तेरे कारण मुझे दूसरोंके सामने कितना नीचा देखना पड़ता है। तुझे कुछ तो अपनी रक्षाका ख्याल करना चाहिए।

माताके कातर बचनोंसे श्रीधरको भी बड़ी चिन्ता हुई। वह मातासे बोला कि—माता! तुम किसी तरहकी चिन्ता न करो। मैं अवश्य तुम्हारे बचनोंका पालन करूंगा। अपनी इस दशाका मुझे भी बहुत दुःख है। इसके बाद उसने पांचसो ऐसे योद्धा, जो एक एक हजार हजार शूरवीरोंको पराजित करनेकी शक्ति रखते थे, अपने अधिकारमें लिए।

वसन्त ऋतु आया। कुछ कुछ गरमी पड़ने लगी। उपवन सब प्रकारके फल फूलोंसे सुन्दर दीखने लगा। वृक्षोंकी डालियों डालियों-पर कोयलका कुहुकरव लोगोंको अपनी ओर आकर्षित करने लगा। लोगोंका मन वसन्त—क्रीड़ाके लिए व्यग्र हो उठा। युवा और युव-तियोंके झुण्डके झुण्ड वनविहारके लिए जाने लगे। नागकुमार भी अपने समवयस्क मित्रोंके साथ जल विहारके लिए गया। उसने बहुत समयतक अनेक तरहकी जल क्रीडाएं की। जब वह जलसे बाहिर निकला उसी समय उसकी माता उसके लिए सुन्दर वस्त्रभू-षण लेकर वहां आ पहुँची। उसने पुत्रको बड़े प्रेमसे वस्त्र पहराये। इसके बीचमें ही एक घटना और हो चुकी। वह यह कि—जब पृथ्वीदेवी वस्त्रभूषण लेकर रास्तेमें आ रही थी तब उसे

अपने महलपर बैठी हुई विशालनेत्राने देखा। वहींपर महाराज जयंधर भी बैठे हुए थे। उसने पृथ्वीदेवीकी ओर इशारा करके महाराजसे कहा कि—प्राणनाथ! देखिए, देखिए पृथ्वीदेवी वस्त्राभूषण लेकर अपने उपपतिके पास जा रही है। सुनकर राजाको बड़ा आश्चर्य हुआ। पर जब उसने देखा कि नागकुमार जलसे बाहिर निकलकर माताके पावोंमें गिरा और माताने वे सब वस्त्र भूषण उसे पहरा दिए तब विशालनेत्राको उसने बहुत धिक्कारा। उधर पृथ्वीदेवी पुत्रको साथ लेकर राजमहल आ गई। इतनेमें राजा भी वहां आ पहुँचा। पृथ्वीदेवीसे उसने पूछा कि इस समय तुम कहांपर गई थीं? पृथ्वीदेवी बोली—अपने प्रिय पुत्रकी जलक्रीड़ा देखने गई थी। राजाने कहा—हां तो अबसे पुत्रको कहीं बाहर न जाने देना। वह महलमें रहा करे, यह कहकर वह वहांसे चल दिया।

इतनेमें नागकुमार वहां आया। उसने माताको चिन्तित देखकर पूछा कि—माता! कहो तुम्हें आज चिन्तित क्यों देखता हूं? क्या किसीने आपको कष्ट पहुँचाया है? पुत्रके प्रेम भरे बचन सुनकर माताने कहा—पुत्र! अभी महाराज आए थे। उन्होंने न जाने किस कारणसे तेरा महलके बाहर जाना रोक दिया है। क्या मैं जैसे पींजरेमें तोता बंदकर दिया जाता है वैसे ही तुझे घरमें बंद देख सकूंगी? मुझे तो जान पड़ता है कि महाराज श्रीधरको प्राणपणसे चाहते हैं और उसे ही वे प्रसिद्ध करना चाहते हैं। इसके सिवा और कोई कारण मैं तेरे बन्द करनेका नहीं देखती।

नागकुमारको अपना घरमें रहना पसन्द नहीं आया। वह उसी

समय हाथीपर सवार हुआ और शहरमें घूम घूमकर शंख पूरने लगा। राजाने आकस्मिक कोलाहल देखकर कहा—जाकर देखो यह कोलाहल क्यों हो रहा है और कौन कर रहा है? उसने पीछा आकर महाराजसे कहा—देव! वह तो अपने राजकुमार हाथीपर बैठे हुए शंख बजा रहे हैं!

पृथ्वीदेवी द्वारा अपनी आज्ञाका उल्लंघन देखकर राजाको बड़ा रंज हुआ। उसने क्रोधमें आकर रानीके वस्त्राभूषण, धन सम्पत्ति आदि सब मंगाकर अपने खजानेमें रखवा दिए और उसे एक सामान्य स्त्रीकी तरह दरिद्रिणी बना दिया।

जब नागकुमार शहरसे लौटकर माताके पास आया तब उसने माताकी और भी बुरी दशा देखी। माताने सब हाल पुत्रसे कह सुनाया। वह उसी समय वहांसे उठकर जूआ खेलनेके अड्डेपर गया। वहां बड़े बड़े राजा मिलकर जूआ खेल रहे थे। उसने भी उनके साथ खेलना आरंभ किया और थोड़ी ही देरमें उन्हें जीतकर कंगाल बना दिए। वहांसे वस्त्राभूषण धनादिक लाकर उसने अपनी माताको सौंप दिये।

उधर वे सब राजे मिलकर जयंधरके पास आए और उनसे उन्होंने नागकुमार द्वारा की हुई अपनी सब दुर्व्यवस्था कह सुनाई। जयंधरको नागकुमारकी इस धृष्टतापर बड़ा रंज हुआ। उसने उसी वक्त उसे बुलवाया और कहा कि तुम जूआ खेलना खूब जानते हो। अच्छा, देखूं तुम्हारी कुशलता इस विषयमें कैसी है? आओ मेरे साथ खेलो तो सही। नागकुमार कौतुकाक्रान्त होकर पिताके साथ ही खेलने लग गया। गर्ज यह कि उसने थोड़ी ही देरमें

राजाको भी हरा दिया और उसके खजाने, देश, आदि सभी जीत लिये। इसके बाद वह महाराजसे बोला कि—पूज्यपाद! बस, अब मै नहीं खेलूंगा। मुझे इतनेमें ही सन्तोष हुआ। यह कह कर नागकुमारने खजानेमेंसे अपनी माताके वस्त्राभूषण तो निकाल लिए और अवशिष्ट जितना धन आदिक उसने जीता था वह महाराजको अर्पण कर दिया। इसके बाद वे वस्त्रादि लेजाकर उसने अपनी माताको सौंप दिए।

पुत्रकी इस विनयशीलतापर प्रसन्न होकर जयंधरने उसके लिए अपने शहरहीके पास एक छोटा, पर बहुत सुन्दर नगर बनवा दिया। नागकुमार अपने सुन्दर नगरमें अपनी प्रियाओंके साथ सुखपूर्वक रहने लगा।

———

तीसरा परिच्छेद ।



इस समय मथुराका राजा जयवर्मा था। उसकी प्रियाका नाम था जयवती। उनके दो पुत्र थे। उनके नाम व्याल और महाव्याल थे। ये दोनों भाई अच्छे विद्वान् और विनयी थे।

एक दिन जयवर्मा मुनिकी वन्दना करनेको गया। साथमें वह अपने दोनों प्रिय पुत्रोंको भी लिवा ले गया। मुनि द्वारा उसने धर्मका पवित्र उपदेश सुना। जब मुनिराज उपदेश देकर विरत हुए तब जयवर्माने उनसे पूछा—प्रभो! मेरे ये दोनों पुत्र अच्छे शूरवीर हैं। इनमें बल बहुत है। इनकी ताकतकी समता एक क्रोड़ शूरवीरोंसे की जाती है। इसलिए मुझे आपसे इनके विषयमें यह बात जाननी है कि क्या इन्हें भी किसी दूसरेकी पराधीनता सहनी होगी, या ये अपने ही राज्यमें रहेंगे? उत्तरमें मुनिने कहा कि—हां यद्यपि ये दोनों ही भाई बड़े भारी शूरवीर हैं, पर तब भी इन्हें दूसरेकी आधीनता स्वीकार करनी पड़ेगी। व्यालका भालस्थ नेत्र जिसके देखनेसे नष्ट हो जायगा वही उसका स्वामी होगा। और इस महाव्यालकी अपूर्व सुन्दरता देखकर भी जो सुन्दरी इसे न चाहेगी उसका पति इसका स्वामी होगा"। मुनिका कथन सुनकर जयवर्माने विचारा कि बड़े आश्चर्यकी बात हैं जो ऐसे शूरवीरोंको भी दूसरेका नौकर बनना पड़ेगा। कर्मकी इस लीलाको धिक्कार है।

उसे इससे बड़ा वैराग्य हुआ। वह उसी समय व्यालको सब राज्य भार देकर साधु बन गया।

राज्य तो उन्हें प्राप्त हो गया, पर उससे उन्हें सन्तोष नहीं हुआ। उन्हें अपनी दास वृत्तिपर बड़ा ही आश्चर्य हुआ। वे इस बातकी खोजमें, कि देखें हमारा स्वामी कौन होगा, अपना राज्य मंत्रीके सुपुर्दकर पटनाको चल दिये।

उस समय पटनाका राजा श्रीवर्मा था। उसकी प्रिया श्रीमती थी। इनके एक पुत्री थी। उसका नाम था गणिकासुन्दरी। दोनों भाई पटना पहुँचे। राजमहलके नीचेसे होकर जाते वक्त इन्हें राजकुमारी गणिका सुंदरीकी एक दासीने देखा। वह इनके रूपको देखकर अपनी मालकिनके पास दौड़ी गई और बोली—कुमारी! मैंने दो बड़े सुन्दर राजकुमार देखे हैं। उनमें एक तो साक्षात् महादेवसा है और दूसरा कामदेवसे किसी बातमें कम नहीं है।

कुमारी बोली—वे कहां है?

दासी बोली—आइए, मैं आपको बतलाती हूं। ऐसा कहकर वह कुमारीको अपने साथ लिवा लाई और झरोखेमेंसे दोनों कुमारोंको उसने उसे दिखला दिये।

कुमारी महाव्यालके रूप सुधाका पान करके बड़ी खुश हुई। साथ ही उसपर कामने अपना आधिपत्य जमा लिया। उसे सारा संसार विना महाव्यालकी प्राप्तिके सूनासा दीख पड़ने लगा।

धीरे धीरे यह बात श्रीवर्माको मालूम हो गई। वह अपनी पुत्रीका उचित जगह प्रेम देखकर बहुत खुश हुआ। उसने बड़ी प्रसन्नतासे राजकुमारीका विवाह महाव्यालके साथ कर दिया।

गणिकासुन्दरीकी उपमाता (धाय) की भी एक कन्या थी । उसका नाम था ललितासुन्दरी । वह भी बड़ी सुन्दरी थी । महाराजकी अनुमतिसे ललितासुन्दरीकी माताने उसका विवाह महाव्यालके बड़े भाई व्यालसे कर दिया । ये दोनों भाई बड़े सुख चैनसे अब पटनामें ही रहने लग गये ।

पटनाके पास ही विजयपुर राजधानी थी । उसका राजा जितशत्रु था । जितशत्रुने श्रीवर्मासे प्रार्थना की—आप अपनी कुमारीका विवाह मुझसे कर दें । श्रीवर्माने उसका विवाह महाव्यालसे कर दिया था, इसलिए उसे इन्कार लिख भेजा । जितशत्रुको श्रीवर्माका यह वर्ताव अच्छा नहीं जान पड़ा । उसने जबरन कुमारीका विवाह करनेके लिए पटनेको जा घेरा । उसके चारों ओर अपनी सेना नियुक्त करदी ।

व्यालको जब लोगोंके द्वारा शहर घेरनेका हाल ज्ञात हुआ तब उसने अपने भाईसे एकान्तमें कहा—श्रीवर्माने हमारा आशातीत उपकार किया है इसलिए हमें चुप बैठना उचित नहीं; किन्तु ऐसे वक्तमें उसे सहायता देना हमारा परम कर्तव्य होना चाहिए । क्योंकि—

न हि कृतमुपकारं साधवो विस्मरन्ति ।

अच्छा मैं जितशत्रुके पास जा कर उसे समझा देता हूं कि तुम इस युद्धमें कुछ लाभ न उठा सकोगे। फिर वह यदि न माने तो उसका उपाय किया जायगा ।

व्याल जितशत्रुके पास गया और उससे बोला कि मुझे महाराज श्रीवर्माने तुम्हारे पास यह कहनेको भेजा है कि, "तुम यहांसे अपने देशको वापिस लौट जाओ । इसीमें तुम्हारी कुशल है । अन्यथा तुम्हें यमका द्वार देखना पड़ेगा—आदि ।"

व्यालके बचनोंको सुनते ही जितशत्रुकी आंखोंमें आग बरसने लगी। वह अपनेको नहीं सम्हाल सका। म्यानसे खड्ग निकालकर वह व्यालके मारनेको उसपर झपटा, पर व्याल तो बड़ा शूरवीर था। इसलिए उसका वह कुछ न कर सका। उल्टा व्यालने ही उसे उसीके डुपट्टेसे बांध लिया और वहांसे लाकर अपने भाईके सामने रख दिया। महाव्यालने उसे श्रीवर्माके पास पहुँचा दिया। श्रीवर्माने उसे केदखानेमें डलवा दिया।

एक दिन व्यालने भाईसे प्रार्थना कर अपने कहीं अन्यत्र जानेकी अनुमति लेली और पटनेसे निकल कर वह कनकपुर पहुँचा। इधर तो यह शहरके पास पहुँचा और उधर नागकुमारका शहर बाहर निकलना हुआ। कुमारके दर्शन मात्रसे व्यालका तीसरा नेत्र नष्ट हो गया। जब नेत्रके नष्ट होनेका हाल उससे लोगोंने कहा और स्वयं भी उसने हाथ ललाट पर फेरकर देखा तो उसे वह नेत्र नहीं दीख पड़ा। यह प्रताप उसने कुमारका ही समझा। वह कुमारके पास गया और उससे बोला कि—

कुमार! आप बड़े पुण्यशाली महात्मा हैं। मेरी इच्छा आपके चरणोंकी सेवा करनेकी है। आप कृपा करके मुझे अपना दास बनाइए।

नागकुमारने उसे एक अच्छा उत्साही युवक देखकर अपने पास रख लिया। इसके बाद उसे अपने साथ साथ वह घरपर लिवा ले गया। घरपर पहुँचकर कुमारने व्यालको तो घरकी रक्षाके लिए द्वारपर नियुक्त किया और आप भीतर चला गया। व्याल

अपना कर्तव्य पालन करनेके लिए द्वारपर ही खड़ा रहकर पहरा देने लगा।

व्याल खड़ा खड़ा पहरा दे रहा था कि इतनेमें बहुतसे योद्धा सजे हुए उसीकी ओर आए। उन्हें देखकर इसने द्वारपालोंसे पूछा कि ये सब कहां जा रहे हैं?

द्वारपालोंने कहा—अपने कुमारका एक सोतेला भाई है। उसका नाम श्रीधर है। उसीके ये योद्धा हैं। ये बड़े क्रूर हैं। ये हर-समय इस चिन्तामें रहा करते हैं कि कभी मौका मिले और कुमा-रको मारडालें। उनकी बात सुनकर व्याल अपने क्रोधके तीव्र वेगको नहीं रोक सका। उसने उसी वक्त हाथी बांधनेके खंभेको उखाड़कर उन्हें आड़े हाथों मारना शुरु किया। कितनेको तो उसने वहीं खेत रख दिए और कितने बेचारे जी लेकर भाग निकले।

इस घटनाका हाल सुनकर कुमार बाहर आया और व्यालकी बीरताकी बड़ी तारीफ करने लगा। उसे वहां आये क्षणभर भी न बीता होगा कि तुरत ही श्रीधर अपने और योद्धाओंको लेकर कुमारपर आ चढ़ा।

श्रीधरकी युद्धके लिए चढ़ाई सुनकर कुमार भी निश्चिन्त न बैठकर उसी वक्त हाथीपर सवार हुआ और युद्धभूमिमें आ डटा।

पुत्रोंके युद्धकी बात पिताके पास पहुंची। जयंधरने उसी समय अपने मंत्रीको भेजकर कहा कि तुम जल्दी जाकर युद्धको रोकदो। मंत्रीने जाकर दोनों भाईयोंको समझाया और उन्हें युद्ध करनेसे रोका। दोनों भाई अपने अपने महल लौट आये।

मंत्री सीधा युद्धभूमिसे महाराजके पास आया और बोला—प्रभो! यह आपसका द्वेष तबतक न मिटेगा जबतक आप दोनोंमेंसे किसी एकको कुछ दिनोंके लिए अपने शहरसे अलग न कर देंगे। और तभी ये दोनों कुशल पूर्वक रह भी सकेंगे।

राजा बोला—तुम कहते हो वह ठीक है। अच्छा तो श्रीधरको जाकर कह दो कि वह यहांसे चला जाये। मैं नागकुमारके विषयमें उसकी कुटिलता बहुत दिनोंसे देख रहा हूं। उसका हृदय बड़ा मलिन है।

मंत्रीने कहा—महाराज! आपका कहना यथार्थ है: और इसमें कोई सन्देह नहीं कि श्रीधर नागकुमारसे शत्रुता रखता है। पर तब भी मैं उचित यही समझता हूं कि नागकुमारको अलग किया जाय। इसका कारण है—मैं श्रीधरमें ऐसा कोई गुण नहीं देखता कि वह विदेशमें अपना पेटतक भी भर सकेगा, किन्तु मुझे विश्वास है कि वह भूख भूख चिल्लाता चिल्लाता ही मर मिटेगा। इस लिए उसपर तो आप दया ही करें। और नागकुमार अच्छा उद्योगी और साहसी है, साथमें पुण्यशाली भी है। उसे आप अलग भी कर देंगे तो वह अपना निर्वाह खूब अच्छी तरहसे कर सकेगा। बल्कि यह समझिये कि विदेशमें वह अच्छी कीर्ति प्राप्त करेगा। उसे आप देखते नहीं कि वह कितना तेजस्वी है।

राजाने कहा—जैसा तुम उचित समझो वही करो। मैं तो यह चाहता हूं कि इन दोनोंका द्वेष मिट जाय।

मंत्री वहांसे सीधा नागकुमारके पास गया और उसे महाराजकी आज्ञा उसने कह सुनाई।

नागकुमार बुद्धिमान् था। वह पिताकी कठोर आज्ञासे कुछ भी विचलित न हुआ। वह मंत्रीसे यह कहकर, कि मुझे महाराजकी आज्ञा स्वीकार है, अपनी माताके पास गया और उससे सब हाल उसने कह दिया। साथमें अपना जाना भी उसने माताको जतला दिया।

इसके बाद वह अपनी प्रेयसीके पास गया और उसे साथ लेकर उसी वक्त वहांसे रवाना हो गया।

जिस दिन नागकुमार गया उस दिन सारे शहरको बड़ा दुःख हुआ। भला, प्रजा प्रिय राजपुत्रका जाना किसे दुःखकर न होगा। यहांतक कि व्यापारियोंने उस दिन हड़ताल करदी।

नागकुमार वहांसे चलकर मथुरामें पहुँचा। वहां वह एक देवदत्ता नामकी ब्राह्मणीके यहां ठहरा। देवदत्ताने इसकी खानपानादिसे पाहुनगति की। नागकुमार ब्राह्मणीकी उदारतापर बड़ा खुश हुआ।

दूसरे दिन भोजनोपरान्त नागकुमार शहरमें जानेको उद्यत हुआ। उसे शहरमें जानेके लिए तैयार देखकर देवदत्ता बोली—

पुत्र! शहर न जाओ।

कुमार! माता, क्यों?

देवदत्ता— यहांका राजा बड़ा दुष्ट है। वह कन्याकुब्जपुरीके राजाकी राजकुमारी सुशीलाको, जिसका सिंहपुरीके राजा हरिवर्माके लिए देना निश्चित हो चुका था, जबरन उससे हरकर अपने यहां ले आया है और उस बेचारीको अपने साथ विवाह करनेको बाध्य करता है। कुमारी उसे पसन्द नहीं करती। इसलिए उस पापीने बेचारीको कैदखानेमें डलवादी है। वह वहां पड़ी पड़ी बड़ी दीनताके साथ

जो वहां होकर निकलता है उसीसे रो रो कर अपने उद्धारकी प्रार्थना किया करती है। उसका रोना आंखोंसे नहीं देखा जाता। पर कठिनता यह है कि उस दुष्ट राजाके पास किसीकी नहीं चलती। जो उसके उद्धारकी चेष्टा करता है, राजा उसे ही भयानक दंड देता है। मुझे विश्वास है कि तुम उसकी वह हालत नहीं सह सकोगे। तुम्हारे दयालु हृदयमें जो "**वसुधैव कुटुम्बकम्।**" की भावना ममा रही है वह कभी बिना उसका उद्धार कराये तुम्हें पीछा न लौटने देगी। संभव है तुम उसमें सफलता प्राप्त न कर सको तो बड़ी विपत्तिके आनेकी संभावना है। इसलिए मैं चाहती हूं कि तुम बाजारमें न जाकर यहीं सुखसे रहो।

कुमारने कहा—मा, तुम इसकी चिन्ता न करो कि मुझे किसी तरहकी तकलीफ उठानी पड़ेगी। मैं बड़ी कुशलतासे इसमें सफलता प्राप्त करूंगा। इसपर भी यदि कुछ घटना हो जाय तो मुझे उसकी कुछ परवा नहीं। क्योंकि यह जीवन यदि दूसरोंके लिये काम न आया तो इसे निस्सार ही समझना चाहिए। कुछ हो, मैं तो एक वक्त उसके पास अवश्य ही जाऊंगा और जिसतरह बन पड़ेगा उसके बचानेकी चेष्टा करूंगा। इतना कह कर नागकुमार देवदत्ताके उत्तरकी कुछ प्रतिक्षा न कर चल दिया। वह वहा पहुंचा जहां सुशीला रो रो कर अपना जीवन बिता रही थी। उससे उसका रोना न देखा गया। वह सुशीलासे बोला—राजकुमारी! तुम अब किसी तरहकी चिन्ता न करो। मैं तुम्हारा इस आपद्दशासे अवश्य उद्धार करूंगा। ऐसा कहकर उसने अपने नौकरोंको आज्ञा दी

कि इन पहरेदारोंको बांधकर इसे अपने स्थानपर लिवा ले चलो। नागकुमारकी आज्ञाका उसी वक्त पालन किया गया। सुशीला बंधनसे निर्मुक्त करदी गई।

अपने नौकरोंकी दुर्दशा और सुशीलाका छुड़ा लेजाना सुनकर दुष्टवाक्यको बड़ा क्रोध आया। वह उसी वक्त सैना लेकर युद्धके लिए नागकुमारपर जा चढ़ा।

उधर व्याल नीलगिरी नामके हाथीको पानी पिलाकर आ रहा था। इस युद्धका कोलाहल उसे सुनाई पड़ा। वह भी वहां आकर उपस्थित हो गया। उसके आते ही दुष्टवाक्यकी नजर उसपर पड़ी और उधरसे व्यालने भी उसे पुकारा। दुष्टवाक्य झटसे उसके पास आया और बोला—प्रभो! क्षमा कीजिए। मेरी गल्ती हुई जो मैंने कुमारके विरुद्ध शस्त्र उठाया। उसे विनीत देखकर व्याल नागकुमारके पास ले गया और कुमारसे प्रार्थना कर उसका अपराध क्षमा करवाया। इसके बाद व्यालने कुमारको अपने इधर आनेका सब हाल सुना दिया। व्यालकी कार्य–कुशलता सुनकर कुमार बड़ा सतुष्ट हुआ।

कुमारने सुशीलाको हरिवर्माके पास, जिससे कि पहले उसकी शादी होना निश्चित हो चुका था, भेजदी। कुमारी अपने अभीष्ट प्रियतमको प्राप्त कर बहुत प्रसन्न हुई।

नागकुमार इस समय पूर्ण युवावस्थाको प्राप्त है। वह एक दिन बगीचेकी शैर करनेको जा रहा था। उस वक्त उसने बहुतसे लोगोंको, जो अपने अपने कन्धोंपर बीन रखे हुए थे, जाते देखा। उसने उनसे पूछा--

आप कहांसे आ रहे हैं?

उनमेंसे एक आगे होकर बोला–हम इस समय काश्मीरसे आ रहे हैं।

कुमार–क्या वह आपका खास देश है?

एक–नहीं, हम वहां इस लिए गये थे कि वहांके राजाकी कुमारी बड़ी रूपवती है। उसका नाम त्रिभुवना है। उसकी प्रतिज्ञा है कि जो मुझे बीन बजानेमें हरा देगा उसीके साथ मैं अपनी शादी करूंगी। हम लोग उसीकी प्राप्तिके लिए गये थे, पर हमे कहते हुए शर्म लगती है कि वह अपने विषयमें बड़ी विदुषी निकली। उससे हमें हार जाना पड़ा। हम अब वापिस अपने वतनको जा रहे हैं। कुमार, मैं एक राजकुमार हूं। मेरे पिता सुप्रतिष्ठ देशके अधिपति हैं। उनका नाम शक प्रसिद्ध है। इतना हाल कहकर कीर्तिवर्मा वहांसे आगे बढ़ा।

कीर्तिवर्माकी बातोंसे नागकुमारकी भी उत्कण्ठा काश्मीर जानेकी हुई। वह कुछ दिनोंके बाद काश्मीरके लिए रवाना हुआ। जब वह काश्मीर पहुँचा तब वहांके राजाने उसका अच्छा सत्कार किया। उसे बड़े उत्सवसे शहरमें प्रवेश कराया। कुमारने अपने आनेका कारण उससे कह सुनाया। उसे यह जानकर बड़ी खुशी हुई कि कुमार उसकी राजकुमारीके साथ विवाहकी इच्छासे आया है।

दूसरे दिन रंगभूमि तैयार की गई। कुमार और कुमारी बीन बजानेको उतरे। दोनों अपनी अपनी चतुरता परिश्रमसे बतलाने लगे। आखिर कुमारने विजयलक्ष्मी प्राप्त की। उपस्थित मंडलीने कुमारके पाण्डित्यकी बड़ी तारीफ की। उन्हें इस वरवधूकी जोड़ीसे बड़ी खुशी हुई। त्रिभुवनाने भी अपनेको धन्य माना।

नन्दने पुत्रीकी प्रतिज्ञाके अनुसार नागकुमारके साथ उसकी शादी करदी। नव युगल सुखसे समय बिताने लगे।

एक दिन नागकुमार राजसभामें बैठा हुआ था। इतनेमें वहा एक साहूकार आया। वह देश विदेशकी शैर करके चला आ रहा था। नागकुमारने इस कौतुकसे, कि वह देश विदेशमें खूब घूमा हुआ है, उससे पूछा—तुमने शैर तो बहुत की है, अच्छा कोई आश्चर्यकी बात भी देखी हो तो बताओ।

साहूकार बोला—कुमार! मुझे पहले यह विश्वास नहीं था कि भूत प्रेत सचमुचमें होते हैं। पर जब मैं भूमितिलक नगरमें आया तब उसके बाहर रम्यक नामके बगीचेमें देखा कि वहा एक मनुष्य बैठा बैठा सब दिन चिल्लाया करता है और कहता है कि मेरी स्त्री-को एक राक्षस यहांसे उठाकर ले उड़ा। वह पासकी गुफामें रहता है। वह चाहता है कि मुझे कोई इस आफतसे छुड़ादे। इसी-लिए उस ओर जो आता है उसीसे वह अपने छुड़ानेकी प्रार्थना किया करता है। मेरे सामने बहुतसे लोग हिम्मत कर करके उसके छुड़ा-नेकी कोशिशें करने लगे पर किसीको सफलता प्राप्त नहीं हुई। जो राक्षसकी गुफामें जाते थे वे फिर वहां कुछ न कुछ प्रसाद बिना पाये नहीं लौटते थे। मुझे तो उस विचित्र घटनासे बड़ा आश्चर्य हुआ।

नागकुमार ऐसी बात सुनकर कब निश्चिन्त बैठनेवाला था! वहां अब उसे क्षणभर भी रहना मुश्किल हो गया। उसके दिलमें उक्त घटनाके देखनेकी बड़ी उत्कण्ठा बढ़ गई। उसने उक्त सब हाल महाराज नन्दसे कह सुनाया और उनसे जानेके लिए प्रार्थना की। नन्द, कुमारका अधिक आग्रह देखकर उसे रोक न सके। वह

अपनी प्रियाको साथ लेकर वहांसे चल दिया और थोड़े ही दिनोंमें घटना स्थलपर जा पहुँचा।

दूसरे दिन वह भोजनादिसे निवृत्त हुआ। बारह बजे होंगे। इतनेमें बगीचेकी एक ओरसे उसके कानोंमें रोनेकी आवाज आई। जिधरसे वह आ रही थी उधर ही वह गया। पहुँच कर उसने देखा कि एक मनुष्य रो रहा है। उसने उससे पूछा—

कुमार—तुम कौन हो?

मनुष्य—महाराज! मैं पारधी हूं।

कुमार—तुम्हारा नाम क्या है?

मनुष्य—जी, रम्यक।

कुमार—किस लिए तुम अभी रोते थे?

मनुष्य—महाराज! मेरी स्त्रीको एक राक्षस ले उड़ा है।

कुमार—क्या तुम्हें उसके रहनेकी जगह मालूम है?

मनुष्य—कुमार! सामने ही गुफा है। उसीमें मैंने उसे घुसते देखा था।

कुमार—चलकर उसे बताओ तो।

मनुष्य—महाराज! मेरी हिम्मत वहां जानेकी नहीं पड़ती।

कुमार—तब?

मनुष्य—हां दूर रहकर दिखा सकता हूं।

कुमार—अच्छा, चलो!

इसके बाद कुमारको लेजाकर उसने गुफा दिखादी। कुमार बड़ी निर्भयताके साथ उसमें जा घुसा। वहां उसने एक भयंकर

राक्षस देखा । पर उसकी कुछ परवा न कर उसके पास वह चला ही गया ।

राक्षस कुमारका प्रतापी चेहरा देखकर स्तंभित हो गया । उससे कुमारके विरुद्ध कुछ नहीं बन बड़ा । उसने उल्टा कुमारका सन्मान किया और उसके सामने हाथ जोड़ कर प्रार्थना की– स्वामी ! इस दासपर क्या आज्ञा होती है ?

कुमारने कहा--तुमने उस बेचारे गरीबकी स्त्रीको अपने पास लाकर बड़ा अन्याय किया है । तुम्हें उचित है कि तुम उसे वापिस लौटादो ।

राक्षसने उसी समय स्त्रीको लाकर कुमारके सामने खड़ी करदी और बोला–प्रभो ! मेरा अपराध क्षमा कीजिए । इसके अतिरिक्त उसने चन्द्रहासखड्ग और एक कामकरंडक नामकी शय्या कुमारकी भेंट की ।

वहांसे निकलकर कुमार उसी पारधीके पास गया और उसे उसकी स्त्री सौंपकर उसने फिर पूछा–क्या इस उपवनमें कुछ और भी देखनेकी वस्तु है ?

पारधी बोला–वह देखिए एक और गुफा है, उसे आप अवश्य देखें । वह देखनेके योग्य है ।

कुमार उसे देखनेको वहांसे चला । उसके पास जाकर वह देखता है तो उसे एक बड़ी खूबसूरत सुन्दरी गुफाके द्वारपर हाथमें सोनेका कलश लिए खड़ी हुई मिली ।

कुमारके पहुँचते ही उसने उसके जलसे पांव धोये और विनीत होकर वह कुमारसे बोली--स्वामी ! गुफाके भीतर प्रवेश कीजिए

कुमार उसके कहनेसे गुफाके भीतर गया। उस स्त्रीने कुमारको एक अच्छे आसनपर बैठाया और बोली—कुछ आज्ञा कीजिए।

कुमार बोला—पहले तुम यह बताओ कि तुम कौन हो और किस लिए यहां आई हो?

वह बोली—मेरा नाम सुदर्शना है। मैं एक देवी हूं। यहां आपहीके लिए ठहरी थी। यहां और भी बहुतसी देवियां हैं। इतने दिनतक मैंने उनकी रक्षा की। अब आप आगये हैं। उन्हें ग्रहणकर उनकी रक्षा कीजिए। वे सब देवियां एक एक विद्याकी एक एक मालकिनी है।

कुमारने कहा—बात क्या है, खुलासा कहो।

सुदर्शना बोली—एक मलकापुर नामका शहर है। उसके राजाका नाम **विद्युत्प्रभ** है। वह विद्याधर है। उसकी रानीका नाम **विमलप्रभा** है। उनका एक पुत्र है। उसका नाम है **जितशत्रु**। उसने इसी गुफामें बारह वर्षतक विद्या साधन की। आकाशगामिनी आदि बहुतसी विद्याएं उसे सिद्ध भी हो गईं।

इसी पर्वतकी अन्तिम गुफामें एक सुवृत्त नामके मुनि ध्यान किया करते थे। वे बडे तपस्वी थे। यहीं उन्हे केवलज्ञान हुआ। उस समय देवता लोग उनकी पूजनके लिए आये। उनके बाजोंका शब्द सुनकर जितशत्रुने एक विद्याको इसलिए भेजी कि देखो, क्या है? यह बाजोंका शब्द कहांसे आता है? उसने पीछी आकर कहा—सुवृत्तमुनिको केवलज्ञान हुआ है। इसलिए देवता उनकी पूजन करनेको आये हैं।

सुनकर जितशत्रु भगवानके दर्शन करनेको गया। वहां उसने धर्मोपदेश सुना। उपदेशका प्रभाव उसके हृदयपर बहुत पड़ा। उसे एक साथ संसारसे वैराग्य हो गया। उसने भगवानसे दीक्षाके लिये प्रार्थना की। उसे दीक्षा दी गई। वह साधु हो गया। तब हमने उससे कहा—तुमने बहुत कष्ट सह-कर हमें प्राप्त कीं। हमारे द्वारा तुम्हें कुछ लाभ भी नहीं हुआ। ऐसी हालतमें तुम्हारा कष्ट उठाना और हमारा आना निष्फल ही हुआ। ऐसा करना तुम्हें ठीक नहीं था। अस्तु। तो अब बतला-इए, हम किसकी आधीनतामें रहें? उसने भगवानसे पूछकर कहा—एक राजकुमार, जिसका नाम नागकुमार है, यहां आयगा। उसी-की आधीनतामें तुम रहना। उसने हमें आपके आनेका दिन भी बतला दिया था। तभीसे हम यहां रहती हैं। आज आपके आनेका दिन था। इसी लिए मैं सोनेका कलश लेकर आपकी प्रतीक्षा कर रही थी। आप भी हमारे पुण्यसे यहां आगये। हम सब आपकी सेवा करनेको तैयार हैं। आज्ञा कीजिए।

नागकुमार उन्हें यह कहकर, कि अच्छा तुम स्वच्छन्द आनन्दसे रहो, पर जब किसी कामके लिए मैं तुम्हें याद करूं तो वहां उप-स्थित होना, चला गया।

कुमार वहांसे निकलकर फिर उसी पारधीके पास आया। उसने उससे पूछा कि इसके अतिरिक्त कहीं और भी तुमने कोई आश्च-र्यकी बात सुनी है क्या? वह बोला—यहांसे उत्तर दिशाकी ओर कुछ दूरपर एक पिशाचकी मूर्ति बनी हुई है। वह दीखनेमें बड़ी भयानक है। उसके पास जानेकी हिम्मत किसीको नहीं होती। वह

ऐसी बुद्धिमानीसे बनाई है कि जो उसके पास जाता है उसका फिर निर्विघ्न आजाना असंभव है।

सुनते ही कुमारको उसके देखनेकी बड़ी उत्कण्ठा हुई। वह वहां जा पहुँचा। उसने बड़ी बारीकीसे उस मूर्तिका निरीक्षण किया और उसमें जो बातें आश्चर्यजनक थीं उन्हें जानलीं। इसके बाद वह बड़ी निर्भीकताके साथ उसके पास चला गया और उस मूर्तिका एक पांव खीचकर उसने उसे नीची गिरा दी। उसके नीचेसे एक खजाना निकला। उसमें एक शिलालेख रक्खा हुआ था। कुमारने उसे उठाकर बांचा। उसमें लिखा था कि—

"जो इस पिशाचमूर्तिको गिरा देगा वह इसके नीचे गड़े हुए धनका मालिक होगा।" शिलालेखको बांचकर उसने विद्याकी अधिष्ठात्री देवियोंको याद किया और उन्हें उस धनकी रक्षाका भार सौंपकर आप वहांसे चल दिया। रास्तेमें उसे एक मुनिराज आते हुए दीख पड़े। वह उनके पास गया और उन्हें नमस्कार कर वहांसे कहीं अन्यत्र जानेके लिए रवाना हुआ।

एक **गिरिकूट** नामका शहर है। उसके राजाका नाम वनराज था। **वनराजकी** रानी थी **वनमाला**। उनके एक पुत्री थी। उसका नाम था **लक्ष्मीमती**। वह बड़ी विदुषी और रूपवती थी। रति उसकी नयन-सुन्दर रूपमधुरिमाको देखकर अपना जन्म निस्सार समझती थी।

वनराजने एक दिन अवधिज्ञानी मुनिसे पूछा—भगवन्! मेरी कुमारीका स्वामी कौन होगा?

मुनि बोले—शहरके बाहर एक बड़ा भारी बड़का झाड़ है। पर वह वर्षोंसे सूखा पड़ा हुआ है। जिस महापुरुषके उसके नीचे बैठनेसे उसपर अंकुर फूट निकलेंगे वही उसका स्वामी होगा। इसलिए वहां हर वक्त एक मनुष्य इस बातके देखनेको रहना चाहिए।

नागकुमार रम्यक वनसे निकलकर गिरिकूट शहरकी ओर आया। बहुत दूरके श्रमको मिटानेकी इच्छासे वह उक्त बड़के नीचे बैठ गया। उसके बैठते ही वर्षोंका सूखा वृक्ष एक साथ अंकुरित हो उठा। वह आदमी, जिसे वनराजने इसी बातकी निगरानीके लिए नियुक्त किया था, नागकुमारके पास आया और उसने वनराजकी सब बातें उसे कह सुनाईं। इसके बाद वह, कुमारसे यह कहकर, कि मैं अपने मालिकको आपके आनेकी सूचना दे आऊं, तबतक आप यहींपर ठहरें, चला गया।

अतिध्वजके द्वारा वनराज नागकुमारके आनेके समाचार सुनकर बड़ा खुश हुआ। वह उसी समय बड़े ठाट बाटसे कुमारको शहरमें लिवा लेजानेको उसके सामने आया। शहरमें उसे लिवा जाकर वनराजने उसकी खूब पाहुनगत की। इसके बाद उसने अच्छे दिनमें अपनी पुत्रीका विवाह नागकुमारसे कर दिया और उसे खूब दहेज दिया।

नागकुमार वहां आनन्दपूर्वक समय बिताने लगा सही, पर उसके हृदयमें यह प्रश्न बारबार उठा करता था कि वनराज कौन है? कैसे इसका नाम वनराज पड़ा है? इस शहरकी स्थितिसे जान पड़ता है कि यह थोड़े ही समयसे वसा है? ये सब बातें क्या हैं? वह इनके जाननेके लिए उत्कण्ठित रहता था।

एक दिन नागकुमारको दो मुनियोंके दर्शन हुए। उनके नाम **जय** और **विजय** थे। उसने समय पाकर उक्त बातें मुनियोंसे पूछीं। तब उनमेंसे जय ने कहा—

एक पुण्ड्रवर्धन पुर है। उसका राजा है **सोमप्रभ**। वह वनराजाका रिश्तेदार है। सोमप्रभके दादाने वनराजके दादाको अपने शहरसे निकाल दिया था। वे आकर इस जगह रहे। यहाँ कई पीढ़ियोंके बाद यह वनराज हुआ। तब इसने अपनी बुद्धि और हिम्मतसे धन और यश प्राप्तकर यह शहर बसाया। उसका नाम गिरिकूट रक्खा। नागकुमारकी उत्कण्ठा मिटी। वह मुनियोंको नमस्कार कर अपने महल चला गया। उसने वहां जाकर एक स्तंभमें यह सब बातें, जैसी कि मुनिने कही थीं, खुदवादीं।

इसके बाद व्यालको बुलाकर उसने कहा—तुम पुण्ड्रवर्धनपुर जाकर वहांके राजा सोमप्रभसे कहो कि—मुझे नागकुमारने आपके पास भेजकर मेरे द्वारा यह सन्देशा कहा है कि "आप गिरिकूटको अपने अधिकारमेंसे छोड़ दीजिए।" व्यालने सोमप्रभसे जाकर उक्त हाल कहा। सुनते ही उसे बड़ा क्रोध आया। वह उसे वरदाश्त न कर सका। उसने कहा—ऐसा कहनेवाला अन्यायी है। उसने क्या समझकर मुझे ऐसा कहलवाया। मैं उसके इस अन्यायको नहीं सह सकता। उससे जाकर कह दो कि यदि तुम अपना हित चाहते हो तो पिताके ही पास रहो। कहीं बाहर न निकलो। जान पड़ता है वह देश विदेशमें ऐसा अनर्थ करनेके लिए ही घूमता

है। उसे अपनी दुष्टता छोड़ देनी चाहिए। नहीं तो उसके लिए यह बहुत हानि कर होगी।

व्यालसे अपने मालिककी बुराई सहन नहीं हुई। वह यद्यपि केवल सन्देशा कहनेको गया था, पर उसे स्वामी—भक्तिके वश होकर सोमप्रभके विरुद्ध कार्य करना पड़ा। उसने उसी समय उसे अपने बलसे बांध लिया और वह हाल नागकुमारके पास लिख भेजा।

पत्र पढ़कर नागकुमार वनराजको लेकर पुण्ड्रवर्द्धनपुर गया। वहां सोमप्रभकी अवस्थापर उसे बड़ी दया आई। उसने व्यालसे कहकर सोमप्रभको छुड़वा दिया। और आप लक्ष्मीमतीके साथ वहीं कुछ दिनोंके लिए ठहर गया।

उधर सोमप्रभको अपनेपर नागकुमारके अनुग्रहसे बड़ा शर्मिन्दा होना पड़ा। उसे कर्मोंकी इस लीलासे बड़ा वैराग्य हुआ। वह अपने उत्कट वैराग्यको रोक नहीं सका। उसने उसी वक्त जाकर यमधृतमुनिसे जिनदीक्षा ग्रहण करली। वह थोड़े ही समयमें अच्छा तपस्वी हो गया। कठिनसे कठिन तपश्चरण करने लगा, परीषह सहने लगा। धन्य ऐसे योगिराजोंको !

चौथा परिच्छेद ।

एक सुप्रतिष्ठक नामक शहर था। वह संसारभरमें प्रसिद्ध था। उसका राजा जयवर्मा था। उसकी रानीका नाम था जयमती। उनके दो पुत्र थे। उनके नाम अछेद्य और अभेद्य थे।

एक दिन पिहिताश्रवमुनि उक्त शहरमें आये। राजा अपने पुत्रोंको लेकर मुनिकी पूजनके लिए गया। मुनिसे उसने धर्मोपदेश सुनकर पूछा—भगवन्! क्या मेरे ये पुत्र किसीकी सेवा करेंगे या अपना राज्य चलायँगे? मुनि बोले—जिस महापुरुषने पुण्ड्रवर्धन नगरसे उसके मालिक सोमप्रभको राज्यच्युत किया है—राज्यसे अलग किया है—वही इनका स्वामी होगा। अपने पुत्रोंका भविष्य सुनकर जयवर्माको बड़ा वैराग्य हुआ। उसने संसारकी इस लीलाको—जो आज राजा है वही कल रंक हो जाता है और जो आज रंक है वह कल राजा होता है—देखकर उसी वक्त अपने बड़े पुत्र अछेद्यको राज्यभार सौंप दिया और आप वनवासी बन गया।

कुछ दिनोंके बाद इसी शहरमें सोमप्रभमुनि कुछ साधुओंको साथ लिए आ निकले। ये दोनों भाई उनकी वन्दना करनेको गये। उन्हें नमस्कार कर इन्होंने पूछा—स्वामी! आपके दीक्षा ग्रहण करनेका कारण मैं सुनना चाहता हूं। सोमप्रभमुनिके दीक्षा लेनेका कारण उनमेंसे एक मुनिने यों कहा—

“ ये पुण्ड्रवर्धनपुरके रहनेवाले हैं। इनका नाम सोमप्रभ है। जयंधरके पुत्र नागकुमारने इन्हें राज्यसे पृथक् कर दिया था। संसा-

रकी इस क्षणिक लीलासे इन्हें बड़ा वैराग्य हुआ। ये उसी समय दीक्षित हो गये।"

सुनकर दोनों भाई पुण्ड्रवर्धनपुर पहुँचे। नागकुमारके दर्शनसे वे बड़े खुश हुए। उन्होंने उसके पास रहनेकी उससे प्रार्थना की। नागकुमारने उन्हें अपने पास रख लिए।

कुमारको वहा रहते रहते कई दिन हो गये। वह वहां उक्ता गया। उसे अन्यत्र जानेकी इच्छा हुई। वह जयवर्मासे आज्ञा लेकर वहांसे चल दिया। रास्तेमें उसे एक **जालांतिक** नामका वन पड़ा। वह शान्ति पानेकी इच्छासे कुछ देरके लिए वहां ठहर गया। जबसे वह चला था उसने कुछ खाया नहीं था। इसलिए वहां वह भूखसे आतुर हो उठा। बगीचेमें कुछ वृक्षोंपर खूब फल लगे हुए थे, पर वे थे विषफल। नागकुमारको यह बात मालूम न थी, इसलिए उसने अपने साथियोंके साथ वे फल खालिए। उसके पुण्यसे उसे कुछ भी हानि न हुई।

इतनेमें दो योद्धा नागकुमारके पास आए। उनके नाम सहस्त्र भट थे। उन्होंने नागकुमारको बड़े विनयसे नमस्कार किया और वे बोले—हम बहुत समयसे आपकी राह देख रह हैं। आपके आज दर्शन हुए, इसकी हमे बड़ी खुशी है। नागकुमारने कहा—किस लिए आप मेरी एह देख रहे थे?

वे बोले—हमने एक दिन एक मुनिसे पूछा था कि हमारा मालिक कौन होगा? तब मुनिने कहा था कि जो जालांतिक वनमें आकर ठहरेगा और उसके वृक्षोंकें विषफल खायगा वही तुम्हारा मालिक होगा। वह हाल हमने अपनी आखोंसे आज देख पाया।

आप हमें अपने दास होनेकी आज्ञा दीजिए । इतना कहकर वे पासहीके शहरमें पहुँचे । वहांके राजा सिंहरथको उन्होंने नागकुमारके आनेकी खबर की । वह वहां आया और नागकुमारको अपने महल लिवा ले गया ।

नागकुमार सिंहरथके अधिक आग्रहसे कुछ दिनोंके लिए वहीं ठहरा रहा ।

एक दिन सिंहरथ राजसभामें बैठा हुआ था, इतमें एक मनुष्यने आकर उसे एक पत्र दिया उसमें लिखा था—

" सिन्धुदेशका राजा चन्द्रप्रद्योतन मेरी पुत्रीसे अपना विवाह करनेके लिए मुझे बाध्य कर रहा है। और मैंने उसका ब्याह नागकुमारके साथ करनेका दृढ़ निश्चय कर लिया था । मैंने इस लिए उसे इन्कार लिख भेजा था। वह इससे रुष्ट होकर मेरेपर चढ़ आया है और कहता है कि यदि तुम अपनी कुमारीका विवाह मुझसे न करोगे तो तुम्हारे राज्यका रहना भी कठिन होगा । "

आप मेरे परम मित्र हैं। आपसे अपना हाल कहना मेरा कर्त्तव्य है। मैं आशा करता हूं कि आप यहां आकर मुझे सहायता देंगे । मैं आपका बड़ा आभारी होऊंगा ।

आपका दर्शनाभिलाषी—

हरिवर्मा ।

पत्र बांचकर उसने नागकुमारसे कहा—मेरे मित्रका पत्र आया है। उसका एक बड़ा जरूरी काम है। इसलिये मैं वहां जाता हूं । आप तबतक यहीं ठहरें । मैं बहुत जल्दी लौटूंगा ।

नागकुमारने कहा ऐसा क्या काम है जिसके लिये आप इतनी

जल्दी करते हैं। यदि कोई खास बात न हो तो कहिए। सिंहरथने हरिवर्माका पत्र नागकुमारको दे दिया। वह पढ़कर बोला—यह चन्द्रप्रद्योनत कौन है ?

सिंहरथने कहा—सौराष्ट्रदेशमें गिरिनगर नामका शहर है। उसीका वह राजा है। उसकी रानीका नाम मृगलोचनी है। उनकी पुत्री गुणवती बड़ी खूबसूरत और विदुषी है। उसीके लिए चन्द्रप्रद्योतन झगड़ा कर रहा है। बाकी हाल तुम पत्रमें पढ़ ही चुके हो।

नागकुमारने कहा—अच्छी बात है। मैं भी आपहीके साथ चलता हूं। देखूं तो वह कैसा बली है ? दूसरे यह भी है कि आपके बिना मेरा यहां दिल भी नहीं लगेगा। वे दोनों वहासे रवाना होकर गिरिनगर जा पहुँचे।

चन्द्रप्रद्योतनको जब उनके आनेका हाल मालूम हुआ और उन्हें युद्धके लिए उसने तैयार देखे तब उसने भी अपने दो वीरोंको जिनके नाम जय और विजय थे, युद्धके लिए भेजे। वे लड़ने लगे। उधर नागकुमारने अपने अछेद्य और अभेद्य वीरोंको लड़नेकी आज्ञा की। दोनों ओरके योद्धा खूब जी झोंककर लड़े, पर आखिरमें विजयलक्ष्मीने वरमाला नागकुमारके वीरोंके गलेमें डाली। उन्होंने चन्द्रप्रद्योतनके वीरोंको बांधकर नागकुमारके पास पहुँचा दिये।

चन्द्र प्रद्योतनको जब यह हाल मालूम पड़ा और शत्रुसेनामें व्याल और अछेद्य अभेद्य आदि बड़े बड़े शूरवीरोंको लड़नेके लिए सन्नद्ध देखे तब वह स्वयं उनसे लड़नेके लिए युद्धभूमिमें उतरा। उसने अपनी सेनामें व्यूह रचना की और उसे योग्य स्थानमें नियुक्त कर वह लड़ने लगा।

चन्द्रप्रद्योतनने सब कुछ किया तब भी उसे विजयलक्ष्मी, इस भयसे कि संसार मुझे व्यभिचारिणी कहेगा, उसके पास न गई और जहां पहले गई थी वहीं बनी रही। नागकुमारके वीरोंने प्रद्योतनको बांधकर उसे अपने मालिकके पास पहुँचा दिया। नागकुमारने उसे हरिवर्माके सुपुर्द कर दिया। उसने उसे अपने कैदखानेमें डलवा दिया।

नागकुमारकी आकस्मिक सहायतासे हरिवर्मा बड़ा प्रसन्न हुआ। वह बोला—आपने इस समय जो मेरा आशातीत उपकार किया है उसका बदला चुकाना मेरे लिए असंभव है। पर फिर भी मैं अपनी कुमारीका आपके साथ विवाह करके आपकी यत्किंचित् सेवा करना चाहता हूं। आप मेरी प्रार्थना स्वीकार कीजिए। इसके बाद उसने अच्छे दिनमें अपनी राजकुमारीका ब्याह कुमारके साथ बड़े ठाट बाटसे कर दिया।

नागकुमार कुछ दिनोंतक वहां ठहरा। इसके बाद वह नेमिनाथ भगवान्‌की यात्राके लिए गिरनार गया। भक्तिभावसे उसने पर्वतकी यात्राकर शान्ति प्राप्त की। उसे पर्वतका प्राकृतिक सौन्दर्य देखकर बड़ा आनन्द मिला।

इस समय कौशाम्बीका राजा शुभचन्द्र था। उसकी रानीका नाम था सुभावती। इसके सात पुत्रियां थीं। उनके नाम थे—स्वयंप्रभा, सुप्रभा, कनकप्रभा, स्वर्णमाला, नन्दा, पद्मश्री, और नागदत्ता।

एक रत्नसंचय नामका शहर था। उसका राजा मेघवाहन विद्याधर था। मेघवाहनने सुकण्ठ नामके राजाको उसकी राजधानीसे

निकाल दिया और उसपर अपना अधिकार कर लिया। सुकण्ठने कौशाम्बीके पास एक शहर बसाया। उसका नाम उसने अलंघ्यपुर रक्खा। वह वहीं बड़े आनन्दसे रहने लगा।

एक दिन शुभचन्द्रकी पुत्रियां कहीं जा रहीं थीं। सुकण्ठने उन्हें देख लिया। उनकी रूपमधुरिमा देखकर वह उनकी प्राप्तिके लिए आतुर हो उठा। उसने उनके लिए उनके पितासे प्रार्थना की। पर शुभचन्द्रने उसकी प्रार्थनापर कुछ ध्यान न दिया। शुभचन्द्रकी इस लापर्वाहीसे उसे बड़ा क्रोध आया। क्रोधसे वह अन्धा बन गया। उसने लाभालाभका कुछ विचार न कर शुभचन्द्रको मरवा डाला और सातों कन्याओंको पकड़ मँगवाया। उसने उनसे विवाहके लिए आग्रह किया। सातोंने मिलकर बड़ी निर्भीकतासे उसे कह दिया—पापी! तूने हमारे पिताको तो मरवा ही डाला है, अब तू हमारा कुछ भी कर हम तेरे साथ कभी ब्याह न करेंगीं। हम आज दृढ़ संकल्प करती हैं कि हम उसी वीरयुवाको अपनायेंगीं—अपने पवित्र हृदयमें उसे जगह देंगीं—जो तुझे मारकर हमारे पिताका बदला लेगा। नहीं तो आजन्म ब्रह्मचारिणी रहकर ही जीवन बितायेंगीं। पर तुझसे चाण्डालका तो कभी स्पर्श भी न करेंगीं। स्पर्श तो दूर रहे, कभी तेरा मुख भी न देखेंगीं। सुकण्ठको इनके कठोर बचनोंसे गुस्सा तो बहुत आया, पर वह उसे बरदाश्त कर गया। उसने बिचारा कि—स्त्रीजातिका गुस्सा तात्कालिक ही बहुत होता है। पर फिर वे धीरे धीरे, जब कि उनके लिए कुछ गति नहीं होती है, तब झखमार कर सब कुछ करने लगती हैं। ये तो अभी लड़कियां हैं। कहांतक इतनी दृढ़ रह सकेंगी?

आज नहीं कल, कल न सहीं परसों, अगत्या एक न एक दिन मेरे ही तो पावोंपर वे गिरेंगीं और मुझसे अपने जीवनकी भिक्षा मांगेगीं। तब अभी क्यों उनसे जबरदस्ती करूं? अभी तो इनका कैदमें डलवा देना ही अच्छा है। जिससे इन्हें अपने कर्त्तव्यका ज्ञान हो और ये अपनी गल्तीपर पश्चात्ताप करें। ऐसा समझकर सुकण्ठने उन्हें जेलखानेमें ठोंस दिया।

वे वहीं रहने लगीं। उन्हें रहते कुछ दिन बीत गये। जब दैवकी मनुष्यपर कृपा होती है तब उन्हें कठिनसे कठिन दुःखसे भी छुट्टी मिल जाती है। इनके लिए भी ऐसा ही हुआ। एक दिनकी बात है कि इनकी सबसे छोटी बहन नागदत्ता संयोगवश जेलखानेसे निकल भागी। वह वहांसे जाकर एक आर्यिकाश्रममें पहुँची। वहां कुछ दिन ठहरी। हस्तिनापुरका राजा अभिचन्द्र शुभचन्द्रका भाई था। नागदत्ताने उसकेपास पहुँचकर अपने पिताके मारे जानेका और अपनी बहनोंको कैदखानेमें डाल देनेका सब हाल उससे कह सुनाया। अभिचन्द्रको सुकंठके इस अन्यायपर बड़ा गुस्सा आया। उसने उसीवक्त पत्र लिखकर नागकुमारको गिरनारसे बुलाया और उससे सब घटना कह सुनाई। नागकुमार इस विषयकी सलाह लेनेको अपने मामाके पास गया।

इसके बाद नागकुमार और अभिचन्द्र शुभचन्द्रकी राजधानीमें गये। वहांसे उन्होंने सुकंठके पास दूत भेजा। उसने नागकुमारके कहे माफिक सब हाल सुकण्ठसे कहा। उसे सुनकर सुकंठ क्रोधमें आकर बोला—मैं उन कन्याओंको हर्गिज नहीं छोड़ सकता। जान पड़ता है तेरे मालिकको काल—सर्पने—डसा है। इसीलिए वह मुझपर

शासन करना चाहता है। जाओ! जाओ!! उससे कहदो कि, यदि हिम्मत हो तो युद्धभूमिमें उत्तरे और फिर कन्याओंके लेनेका हौश करे।

दूतके द्वारा उसे युद्धके लिए तैयार सुनकर नागकुमार भी युद्ध-भूमिमें जा पहुँचा। उसने अपनी सब विद्याओंको भी बुलवाई।

दोनों ओंरसे भयंकर युद्धका सूत्रपात हुआ। दोनों ओरके योद्धा जी झोंककर लड़ने लगे। आखिर कुमारने अपने चन्द्रहास खड्गद्वारा सुकंठका शिर काट दिया।

सुकंठका एक पुत्र था। उसका नाम वज्रकंठ था। वज्रकंठ नागकुमारकी शरण गया और उसे बड़े उत्सवके साथ अपने शहरमें लाया। इसके बाद अपनी छोटी बहन रुक्मणीका ब्याह उसने नागकुमारसे कर दिया। इसके अतिरिक्त नागकुमारने शुभचन्दकी सातों-कन्याओंको और अभिचन्द्रकी चन्द्रप्रभा नामकी राजकुमारीको और ब्याही। वह अब कुछ दिनोंके लिए हस्तिनापुरमें ठहर गया। वहां अपनी प्रियाओंके साथ वह आनन्दमे रहने लगा।

पाण्डुदेशके अन्तर्गत एक मथुरा पुरी थी। उसका राजा मेघवाहन था। उसकी रानीका नाम था जयलक्ष्मी। उनके श्रीमती नामकी पुत्री थी। उसने प्रतिज्ञा की थी कि—जो मुझे नृत्य करते वक्त मधुर मृदंगध्वनिके द्वारा मेरा मन मुग्ध कर सकेगा वही मेरा स्वामी हो सकेगा।

जयलक्ष्मीकी धायके भी एक लड़की थी। उसका नाम कामलता था। वह अपना ब्याह ही करना नहीं चाहती थी। यह सुनकर महाव्याल वहां आया।

एक दिन मेघवाहनके भानजेने आकर कामलताके लिए अपने मामासे प्रार्थना की। मेघवाहनने उसे दे भी दी। वह उसे ब्याहनेके लिये अपने शहर लिए जाता था। पर कामलता उसे पसन्द नहीं करती थी। रास्तेमें उसे महाव्याल दीख पड़ा। उसे देखते ही वह चिल्लाई और बोली—मेरी रक्षा कीजिए, मुझे बचाइए। महाव्यालने कामांकसे कहा—इस बेचारीके साथ क्यों जबरदस्ती की जा रही है? इसे छोड़ते क्यों नहीं?

कामाक बोला—मैं इसे छोड़ सकता हूं; पर इस शर्तपर कि यदि तुम इसे न ब्याहो। इसके सिवा मैं इसे नहीं छोड़ सकता।

महाव्यालने कहा—हां यह हो सकता है कि मैं स्वयं अपनी इच्छासे इसके साथ ब्याह न करूं। पर इसकी इच्छामें मैं बाधक नहीं हो सकता। अर्थात्—इसकी इच्छा मेरे साथ विवाह करनेकी होनेपर मैं इन्कार नहीं कर सकूंगा।

कामांकने कहा—नहीं, तुम्हें यह भी शर्त करनी पड़ेगी कि इसकी इच्छा होनेपर भी मैं इसे न ब्याहूंगा।

महाव्याल बोला—इसके लिए मैं तुम्हारा बाध्य नहीं।

कामांकने कहा—तब मैं भी इसे न छोडूंगा।

महाव्याल बोला—तुम्हें छोड़ना होगा।

महाव्याालने जब देखा कि इतने समझानेपर भी यह रास्तेपर नहीं आता तब इसका इसे कुछ फल भी दिखाना चाहिए। यह विचार कर वह बोला—या तो तुम्हें इसे छोड़ देना चाहिए नहीं तो मुझे जबरन तुमपर आक्रमण करके इसकी रक्षा करनी होगी।

मैं अपनी आखोंसे यह बलात्कार नहीं देख सकता। जब तुम्हें वह चाहती ही नहीं तब तुम्हारी उसपर इतनी ज्यादती क्यों?

कामांकने कहा—मैं तुम्हारी ऐसी थोथी धमकियोंसे डरने वाला नहीं। तुममें हिम्मत हो तो छुड़ालो नहीं तो चलते बनो।

महाव्यालको आखिर अगत्या कामांकके विरुद्ध शस्त्र उठाना पड़ा। कामांकने भी म्यानसे तलवार खींची। दोनोंकी मुठभेड़ हो गई। दोनोंने अपनी कुशलता शस्त्र चलानेमें खूब बतलाई। आखिर महाव्यालने उसका शिर धड़से जुदा कर दिया।

मेघवाहनको जब यह खबर मिली तब वह उसी वक्त वहां आकर महाव्यालको अपने महल लिवा ले गया और कामलताका ब्याह उसने उसके साथ कर दिया। महाव्याल सुखपूर्वक वहीं रहने लगा।

मथुरापुरीसे महाव्याल उज्जयिनी आया। उस समय उसका राजा जयसेन था और उसकी रानी थी जयश्री। मेनका नामकी उनके एक पुत्री थी। महाव्यालने मथुरामें सुना था, कि मेनका किसीको पसन्द नहीं करती। चाहे वह फिर कितना ही खूबसूरत क्यों न हो। महाव्याल उसकी प्रतिज्ञा सुनकर यहां आया है। जब महाव्याल बाजारमें एक सुन्दर जगह बैठा हुआ था और उसके सौन्दर्यको देखनेके लिए हजारों पुरुष इकट्ठे हो रहे थे, उसी समय मेनका भी उधर आ निकली। उसने लोगोंकी भीड़ देखकर पूछा कि ये लोग क्यों इकट्ठे हो रहे हैं? उसकी एक सहचरीने कहा—कुमारी! एक बड़ा खूबसूरत युवा जो कामसे सुन्दरतामें कम नहीं है, यहां बैठा हुआ है। उसीके देखनेके लिए ये सब लोग इकट्ठे हो रहे हैं।

कुमारीने कहा—देखे मैं भी वह कैसा है ? कुमारीने उसे देखा और एक व्यंग भरी हँसी हँसकर वह चलदी।

उसके इसतरह चले जानेसे महाव्यालको बड़ा आश्चर्य हुआ। उसे उसी वक्त मुनिके वचन याद हो आये। वह वहांसे अपने बड़े भाईके पास हस्तिनापुर गया और अपने आनेका कारण उसने उससे कह दिया। वह यह भी बोला, कि जान पड़ता है तुम्हारा और मेरा स्वामी एक ही होगा। मुझे पूर्ण आशा है—मेनका नागकुमारको अवश्य पसन्द करेगी। कुमारका चित्रपट उसे दिखाना चाहिए। व्यालने उसकी सलाह पसन्द की। भाईकी सम्मतिसे महाव्याल कुमारका चित्रपट उज्जयिनीकी राजकुमारीके पास लेगया और वह उसे उसने दिखा दिया। कुमारी नागकुमारकी रूप-सुधाका परोक्ष पानकर भी बहुत सन्तुष्ट हुई। उसने अपना हृदय एक दम कुमारको दे डाला !

महाव्याल बड़े भाईको साथ लेकर नागकुमारके पास आया। नागकुमारने व्यालसे पूछा—यह कौन है ? व्यालने कहा—देव ! ये मेरे छोटे भाई हैं। आपहीकी सेवाके लिए यहां आये हैं। आप इन्हें अपनाइए। सुनकर कुमारको बड़ा हर्ष हुआ।

इसके बाद महाव्यालने मेनकाके सम्बन्धकी बातका प्रसंग छेड़ा। कुमार महाव्यालको साथ लेकर उज्जयिनी पहुँचा। जयसेनने उसका बड़ा सत्कार किया और उसके साथ अपनी कुमारीको व्याह दिया।

इसके बाद वह मथुरा आया और श्रीमतीको अपने मृदंग बजानेके कौशलसे मुग्धकर उसने उससे भी व्याह कर लिया।

एक दिन एक साहूकार आया। उससे नागकुमारने पूछा कि

आपने तो बड़ी बड़ी दूरकी सफर की है, कहिए तो कुछ आश्चर्य की बात आपके देखनेमें आई ?

वह बोला—कुमार ! मैंने देखी तो अवश्य है, पर उसका रहस्य मैं नहीं जान पाया । वह बात यह है—समुद्रके बीचके स्थलभागमें एक बड़ा रमणीय भूमितिलक नामका नगर है । वहां एक जिन मन्दिर है । जब प्रतिदिन दो पहरका वक्त आता है तब वहां बहुतसी बड़ी खूबसूरत लड़कियां रोया करती हैं । मैं नहीं कह सकता कि उनके रोनेका कारण क्या है ?

कुमारने उसकी अचरज भरी बात सुनकर अपनी विद्याओंको स्मरण किया । विद्याएं आईं और कुमारको उन्होंने उसके कहे माफिक स्थानपर ला पहुँचाया । कुमार पहले व्यालादिके साथ जिनमन्दिर गया । वह जब भगवान्के दर्शन कर बाहर निकला तब उसे सुनाई पड़ा—

" देवताओ, गन्धर्वो, यक्षो, राक्षसो, दानवो ! ! तुम हमारी प्रार्थना सुनो । पापी वायुवेगने हमें कैद कर रक्खीं हैं और वह हमसे बलात् शादी करना चाहता है । तुम हमारी रक्षा करो ! हम बड़ी दुःखदशामें सड़ रही हैं । "

सुनकर नागकुमार उनके पास पहुँचा । उसने उनसे पूछा—पूरा हाल अपना सुना जाओ । तुम किसी तरहकी चिंता न करो । मेरे रहते तुम्हें कोई नहीं सता सकता ।

उनमेंसे धरणिसुन्दरीने कहा—हमारा पिता पृथ्वीतिलक शहरका राजा है । एक दिन हमारे मामाके लडके वायुवेगने पिताजीसे कहा कि आप अपनी कुमारियोंका विवाह मुझसे कर दीजिए । पिता उसके कुरूपको देखकर हँस पड़े । उन्होंने कहा—तुम पहले अपने रूपका संस्कार करके आओ फिर देखा जायगा । वह इतना कुरूप है कि

उसे साधारण स्त्री भी नहीं चाहेगी और न उसमें कोई ऐसे गुण ही हैं जिन्हें देखकर पिताजी उसके साथ हमें ब्याह देते।

पिताजीके कहनेका उसके चित्तपर बुरा असर पड़ा। वह युद्ध करता, पर युद्धके लायक उसके पास कुछ साधन न था। अगत्या पिताजीसे बदला लेनेके लिए उसने राक्षसी विद्याएं सिद्ध कीं और उनके बलसे उसने पिताजीको मरवा डाला। इसके बाद उसने जबरन हमसे विवाह करना चाहा। हमने उससे कह दिया कि तू चाहे हमारी जान भी क्यों न ले, पर हम उसीके साथ अपना ब्याह करेंगीं कि जो कि तेरा शिर काटकर हमारे पिताका बदला ले सकेगा।

वह बोला—खैर देखूं संसारमें मुझसा कौन बली है? इस लिए छह महीनेकी मैं तुम्हें मोहलत देता हूं कि तुम तबतक मुझसा बली योद्धा लाकर मुझसे लड़ाओ। यदि वह मुझे जीतलेगा तब तो मैं तुम्हें छोड़ ही दूंगा। अन्यथा तुम्हें जबरन मुझसे ब्याह करना होगा। यह कहकर उसने हमें कैदखानेमें डाल रक्खी हैं। हमारे रक्ष और महारक्षक दो भाई है, उन्हें भी उसने कैद कर लिए हैं।"

नागकुमारने उनका वृत्तान्त सुना। उसे वायुवेगपर बड़ा क्रोध आया। पहले उसने उन बालिकाओंको छुड़ाकर उनकी रक्षाका भार अपने किसी आत्मीयको सौंपा। इसके बाद वह युद्धके लिए तैयार हुआ। उसने वायुवेगको भी कहला भेजा कि मैंने तेरे पहरेदारोंको मार कर मेघवाहनकी सब लड़कियोंको छुड़ा लिया है। तुझमें कुछ हिम्मत हो तो तू उन्हें मुझसे छीन कर लेजा।

वायुवेग नागकुमारकी इस गुस्ताखीपर बड़ा बिगड़ा। उसने फौरन ही युद्धका बाजा बजवाया और स्वयं बड़े दल बलसे नागकुमार पर चढ़ आया। नागकुमार भी सजग था।

दोनोंमें घनघोर युद्ध आरंभ हुआ। शस्त्रोंकी टक्करसे निरभ्र बादलमें भी बिजलियां इधर उधर दौड़ने लगीं। पृथ्वी, हाथी और घोड़ोंकी भयंकर गर्जना और हिनहिनाहटसे कांप उठी। युद्धभूमिने विकराल रूप धारण किया। वीर पुरुष देवकन्याओंके सौन्दर्य सुधाकी लालसासे—महत्त्वाकांक्षासे—जी तोड़कर लड़ने लगे। कई घण्टे युद्ध हुआ, पर जयश्रीने तबतक किसीका भी हाथ न पकड़ा। यह देख वायुवेगने गुस्सेमें आकर अपनी विद्याके जोरसे जल वर्षाना शुरू किया। नागकुमारने उसे प्रचण्ड वायुवेगसे हटाया। वायुवेगने फिर अन्धकार कर दिया। नागकुमारने चारों ओर प्रकाश फैला दिया। नागकुमार जितना जितना उसके चलाए प्रयोगोंको व्यर्थ करता जाता था उतना ही वह खीज खीज कर भयंकर प्रयोगोंको काममें लाता था। अबकी उसने एक साथ जलप्रवाह छोड़ा। नागकुमारको उसके नष्ट करनेको वाडवानलका प्रयोग करना पड़ा।

जब वायुवेग विद्याओंके प्रयोग द्वारा नागकुमारपर विजय न पा सका तब उसे शस्त्र हाथमें उठाना पड़ा। वह खड्ग निकालकर नागकुमारका शिर काट लेनेको झपटा। नागकुमार इतने समयतक तो केवल यह देखनेके लिए—देखें वायुवेगमें कितनी हिम्मत है, लड़ रहा था, पर जब वायुवेग उसपर झपटा तब उससे न रहा गया। उसने म्यानसे तलवार निकालकर उसका शिर काट लिया। वायुवेग धड़ामसे पृथ्वीपर गिर पड़ा। उसकी सेनामें हाहाकार मच गया। उसे जिधरसे रास्ता मिला वह उधरसे भाग निकली। जयश्रीने नागकुमारको अपनाया।

इसके बाद वे सब बालिकाएं कुमारसे ब्याह दी गईं। कुमार

वायुवेगके राज्यको रक्ष और महारक्षको सौंपकर वहांसे चल दिया। रास्तेमें उसे और भी बहुत योद्धा मिले। उन्होंने कुमारकी दासवृत्ति स्वीकार की। कुमारने उनसे उसका कारण पूछा, उन्होंने कहा—हमें एक मुनिराजने यह कहा था कि—जो मेघवाहनकी कन्याओंको ब्याहेगा वही तुम्हारा स्वामी होगा। इसलिए हम आपकी सेवामें आये हैं।

कुमार वहांसे कांचीपुर पहुँचा। वहांके राजा पल्लवने उसकी अच्छी पाहुनगतकी। कुमार कुछ दिन वहां ठहरकर आगे बढ़ा। रास्तेमें उसे दंतिपुर मिला। उस समय उसका राजा चन्द्रगुप्त था। उसकी रानीका नाम चन्द्रमती था। उनके एक कन्या थी। उसका नाम था मदनमंजूषा। चन्द्रगुप्तने नागकुमारको एक तेजस्वी और बुद्धिमान राजकुमार देखकर उसके साथ अपनी प्रिय पुत्रीका ब्याह कर दिया।

इसके बाद—कुमारकी खूब प्रसिद्धि सुनकर त्रिलोकतिलक शहरके राजा विजयंधरने भी अपनी कुमारी श्रीमतीका ब्याह बड़े उत्सवके साथ नागकुमारसे कर दिया।

नागकुमार श्रीमतीसे ब्याह कर कुछ दिन वहीं ठहरा रहा। वहीं वह आनन्दसे अपने सुखके दिन बिताने लगा। इसी बीचमें वहां पिहिताश्रव मुनि आये। नागकुमार उनकी वन्दनाके लिए गया। उन्हें नमस्कार कर उसने उनसे श्रावकधर्मका स्वरूप पूछा। मुनिने उसे जो उपदेश दिया उसका सार पांचवें परिच्छेदमें पढ़िए।

पांचवां परिच्छेद ।

जैसे जड़ें वृक्षकी मजबूतीकी कारण होती हैं और मकानकी नींव उसके दृढ़ताकी कारण होती है उसीतरह सम्यक्त्व सब व्रतोंकी दृढ़ताका कारण है ।

सम्यक्त्व—देव, गुरु, शास्त्र अथवा तत्त्वोंके श्रद्धान करनेको कहते हैं ।

देव—वह होना चाहिए जिसमें क्षुधा, तृषा, जरा, रोग, जन्म, भय, अभिमान, राग, द्वेष, चिन्ता, रति, अरति, शोक आदि दोष न हों, जो वीतरागी हो और हितका उपदेश करनेवाला हो ।

गुरु—वह कहलाता है जो विषयोंकी आशासे मुक्त हो, निरारंभी हो, जिसके पास किसी प्रकारका परिग्रह—धन, सम्पत्ति, चांदी, सोना, घर, बाग बगीचा न हो और जो निरन्तर ज्ञानाभ्यास, तपश्चर्यामें मग्न रहता हो ।

शास्त्र—वह सच्चा है, जिसमें जीवोंकी रक्षाका उपदेश दिया गया हो । जिसके प्रकरणोंमें कहीं परस्परमें विरोध न आता हो और विरागी महात्माओं द्वारा दूसरेके हितकी कामनासे जिसका निर्माण हुआ हो ।

तत्त्व सात हैं—

जीव—जो चेतनामय हो ।

अजीव—जिसमें चेतना न हो ।

आश्रव—कर्मोंके आनेका जो रास्ता हो ।

बन्ध—आत्मा और कर्मोंके प्रदेशोंका परस्परमें एक क्षेत्रावगाह होना ।

सम्वर—कर्मोंके आनेके रास्तेका बन्द होना।

निर्जरा—कर्मोंका एक देश क्षय होना।

मोक्ष—सब कर्मोंका नष्ट हो जाना।

सम्यक्त्वके दश भेद हैं--

आज्ञासम्यक्त्व—वीतराग भगवानके बचनोंपर श्रद्धान करना।

मार्गसम्यक्त्व—मोक्षमार्गका बाह्याभ्यन्तर परिग्रह रहित श्रद्धान करना।

उपदेशसम्यक्त्व—त्रेसठ शलाकाके पुरुषोंका पवित्र चरित्र सुनकर श्रद्धान करना।

सूत्रसम्यक्त्व—मुनियोंकी आचरण विधि सुनकर श्रद्धान करना।

बीजसम्यक्त्व—बीजगणित आदि करणानुयोगके ग्रन्थ सुनकर श्रद्धान करना।

संक्षेपसम्यक्त्व—पदार्थोंके संक्षिप्त स्वरूपको जान कर श्रद्धान करना।

विस्तारसम्यक्त्व—द्वादशांग शास्त्रको सुनकर श्रद्धान करना।

अर्थसम्यक्त्व—जैन शास्त्रोंके किसी एक वाक्यको जान कर श्रद्धान करना।

अवगाढ़सम्यक्त्व—अंग और अंगबाह्य शास्त्रको जान कर श्रद्धान करना। यह सम्यक्त्व श्रुतकेवलीके होता है।

परमावगाढ़सम्यक्त्व—केवलज्ञानके द्वारा पदार्थोंको जानकर श्रद्धान करना। यह सम्यक्त्व केवली भगवानके होता है।

श्रावकोंके आठमूल गुण—

मद्य—एक अपवित्र वस्तु है। उसके पीनेसे ज्ञान नष्ट होता

है। शराबी पुरुष जब नशेमें मत्त होता है तब उसे लोकलाज धर्म–कर्म आदिका कुछ भान नहीं रहता। वह उस समय बुरासे बुरा काम करनेपर उतर आता है। उसे यह भी भान नहीं रहता कि कौन तो मेरी माता है? कौन बहन है? कौन स्त्री है? कौन लड़की है? वह सबको एकसा देखकर उनके साथ अपनी बुरी बासनाओंके सफल करनेके लिए छटपटाता है। शराबी जब शराब पीकर चलता है तब उसकी बड़ी बुरी हालत हो जाती है। उसके पांव कहींके कहीं गिरते हैं। वह अपनेको बिल्कुल भूल जाता है। नशेमें उसे कुछ सुधि नहीं रहती। वह चक्कर खाकर गिर भी पड़ता है। लोग उसकी दिल्लगी उड़ाते हैं। कुत्ते उसके मुँहमें मूतते हैं। मतलब यह कि शराबीकी सब तरह दुर्दशा होती है। इसलिए जो बुद्धिमान् हैं उन्हें न केवल शराब–मद्य–ही किन्तु नशे नामका परित्याग करना चाहिए।

मांस–बड़ा घृणित पदार्थ है। उसके तो देखने मात्रसे घृणा–नफरत–पैदा होती है, उल्टी होने लगती है। न जाने लोग उसे कैसे खालेते हैं? उनका हृदय बड़ा निर्दयी और कठोर है। मांस जीवोंकी हिंसासे पैदा होता है और जीवमय होता है। निर्दयी मनुष्य निरपराध पशुओंको मारते हैं और फिर उन्हें पकाकर खाते हैं। बड़ा अचंभा होता है कि जब उन्हें किसी तरहकी तकलीफ होती है अथवा उनके हाथपावोंमें कांटा या चाकू लग जाता है तब तो वे बडे दुःखी होते हैं–तड़फने लगते हैं–फिर न जावे क्यों उन्हें बुद्धि नहीं होती कि दूसरे जीवोंके गलेपर छुरी फेरनेसे उन्हें भी बेहद कष्ट होता होगा? पर वे अपनी नीच लालसाको-घृणित जीभके स्वादको-अच्छा समझकर

ऐसे राक्षसी कामोंका करना बुरा नहीं समझते। अपने बच्चे कुछ देरके लिए कहीं खो जावें तब तो वे आतुर हो उठते हैं, उनके घरोंमें रोना धोना मच जाता है, हा हा कारके मारे वे जमीन आसमानको एक कर डालते हैं और बेचारे निरपराध दीन पशुओंको बिल बिलाते छोड़कर उनके बाल बच्चोंको वे सदाके लिए उनसे बिछुड़ा देते हैं—निर्दयी होकर अपनी तीक्ष्ण तलवार या छुरीसे उनके गले काट डालते हैं—तब उन्हें कुछ दुःख नहीं होता। कैसा राक्षसी काम! वे मलमूत्र आदि वस्तुओंसे घृणा करते हैं—पर न जाने फिर क्यों वे जहां पैदा होती हैं—जो मलमूत्रमय ही है, उसे वे खा डालते हैं ?

बहुतसे मांस खानेवाले यह कहा करते हैं—" **जीवो जीवस्य जीवनम्** " अर्थात् जीव जीवका जीवन है—रक्षक है। पर यह उनकी गल्ती है। जीवका प्राकृतिक जीवन-आहार-फलादिक हैं। जिनके खानेसे किसी प्रकारकी क्रूरता न आकर प्राकृतिक शान्ति बनी रहती है। मांस खानेवाले क्रूर और निर्दयी होते हैं, इसलिए उनमें स्वाभाविक शान्ति नहीं होती।

जीभके लोलुपी लोग मांसको चाहे कैसा ही बतावें पर इसमें कोई सन्देह नहीं कि संसारमें उससे बुरी और घृणित वस्तु कोई नहीं है। जिनके हृदयमें दया होती है, जो दुःख—कष्ट—को अपने और दूसरोंके समान तकलीफका हेतु समझते हैं वे तो कभी हर्गिज मांस नहीं खायेंगे और जिनकी मनुष्यदशामें भी राक्षसी प्रकृति है उनके लिए तो कहना ही क्या है? जब उनमें मनुष्यत्व ही नहीं

तब उन्हें कहा ही क्या जाय? पर बुद्धिमानोंको मांस खाना उचित नहीं।

मधु—शहत भी अपवित्र है। उसमें सूक्ष्म सूक्ष्म अनन्त जन्तु होते हैं। उनकी रक्षा नहीं हो सकती। इसलिए उसके खानेवालेको पाप बन्ध होता है। उसकी पैदायश जीवोंकी बिना हिंसाके नहीं हो पाती और वह है भी केवल जीवोंका उच्छिष्ट। इसलिए दयालु पुरुषोंको शहत खाना उचित नहीं।

अहिंसाणुव्रत—जीवोंकी हिंसाके छोड़नेको कहते हैं। जैन धर्मकी भित्ति इसी अहिंसाव्रतपर निर्भर है। और इसीकी वृद्धि, रक्षाके लिए और और झूंठ, चोरी आदि पापोंके छोड़नेका उपदेश दिया गया है। जैनधर्म कहता है—चाहे छोटा जीव हो, चाहे बड़ा, पर उसकी जान बूझकर वा कषायोंसे कभी हिंसा न करो। तुम्हें कोई धन देता हो, या राज्य भी मिलता हो तब भी उसे पांवकी ठोकरसे लुढ़का दो, पर दूसरोंको कभी तकलीफ न दो।

सत्याणुव्रत—झूठके छोड़नेको कहते हैं। अर्थात् इस व्रतके पालन करनेवालेको सदा सत्य बोलना चाहिए। पर ऐसा सत्य बोलना भी उचित नहीं, जिससे निष्कारण दूसरेके प्राण जाते हों या उसे कष्ट होता हो।

अचौर्याणुव्रत—कहीं रक्खे हुए, रास्तेमें पड़े हुए, भुले हुए, दूसरेकी वस्तुको न लेनेको कहते हैं। ऐसी वस्तुएं न तो स्वयं ही लेनी चाहिएं और न उठाकर दूसरेको दे देनी चाहिएं।

ब्रह्मचर्याणुव्रत—परस्त्रियोंको छोड़ने और स्वस्त्रीसे सन्तोष करनेको कहते हैं। ब्रह्मचर्य मनुष्य—जीवनका भूषण है। जिसमें ब्रह्म-

चर्य नहीं वह मनुष्य मनुष्यत्वसे रहित है। जबतक पूर्ण ब्रह्मचर्य के पालनकी शक्ति न हो तबतक परस्त्रियोंसे, उनके एकान्त संवाससे और एकान्तमें उनके साथ संभाषणादि करनेसे बचकर स्वदार सन्तोषव्रत पालना चाहिए। गृहस्थोंके लिए यही ब्रह्मचर्यव्रत है। वे इसे जब साधलेंगे इसमें अटल हो जायँगे तब उन्हें ऊपर चढ़नेको भी कठिनाई न पड़ेगी। इसलिए सदा अपने अभ्यासको बढ़ानेके लिए और पापसे बचनेके लिए ब्रह्मचर्याणुव्रतका पालन करना आवश्यक है।

परिग्रहपरिमाणव्रत—धन, धान्य, सुवर्ण, चांदी, दास, दासी आदि दश प्रकारके परिग्रहके परिमाण—इयत्ता—करनेको कहते हैं। जितनी तृष्णा अधिक बढ़ती है उतनाही अधिक अनर्थ भी होता है। इस लिए तृष्णाको घटाने और सन्तोषको बढ़ानेके लिए परिग्रहपरिमाणव्रत धारण करना आवश्यक है।

शील सात हैं—

दिग्व्रत—दिशाकी मर्यादाके भीतर इतने योजनतक वा अमुक पर्वत, अमुक समुद्र वा नदीतक जानेकी मर्यादा करनेको कहते हैं।

अनर्थदण्डव्रत--पापका उपदेश देना, हिंसाके उपकरण छुरी चाकू आदिका दान देना, दूसरोंका बुरा विचारना, हिंसाके पुष्ट करनेवाले वा रागके बढ़ानेवाले शास्त्रोंका सुनना और बिना प्रयोजन भूमिका खोदना जल ढोलना, वनस्पति तोड़ना, ये सब अनर्थदण्ड कह लाते हैं इन्हें छोड़ना चाहिए।

भोगोपभोगपरिमाणव्रत–भोग वह है जो एक ही वक्त उपयोगमें आये। जैसे–भोजन आदि। उपभोग वह है जो बार बार उपयोगमें आये। जैसे भूषण, वस्त्र, आदि।

ऐसे पदार्थोंके सेवनका **नियम**–महीना, दो महिना, छह महिना, वर्ष आदिकी मर्यादाको लिए, या **यम**-जीवनभरकी मर्यादाको लिए परिमाण करनेको भोगोपभोगपरिमाणव्रत कहते हैं।

शिक्षाव्रत चार हैं—

देशावकाशिकशिक्षाव्रत–कालकी मर्यादा लिए पांच अणुव्रतका प्रतिदिन संकोच करनेको कहते हैं। अर्थात् पहले गृहण किए हुए अणुव्रतोंमें कालकी अवधिको लेकर प्रतिदिन कमी करनेको देशावकाशिकशिक्षाव्रत कहते हैं।

सामायिकशिक्षाव्रत–किसी नियत समय पर्यन्त पाचो पापोंके सम्पूर्णपने छोड़नेको कहते हैं। सामायिक करते वक्त एकान्त स्थान जैसे बन, जिनालय अथवा और कोई निरुपद्रव स्थान होना चाहिए। सामायिक करनेवालेको उचित है कि वह शरीर मन बचनकी चेष्टाको सब ओरसे रोककर बड़ी निश्चलतासे सामायिक करे। सामायिकका मतलब ही यह है कि परिणामोंमें समता पैदा हो। उससमय किसी प्रकारका उपद्रव भी यदि आये तो फिर चलाचित्त न होकर उसे बड़ी धीरतासे सह लेना चाहिए।

प्रोषधोपवासशिक्षाव्रत–अष्टमी चतुर्दशी आदि पर्व तिथियोंमें इच्छापूर्वक चारप्रकारके आहारका त्याग करनेको कहते हैं। उपवासके दिन पांचपाप, आरंभ, स्नानादि न करना चाहिए। और सब दिन बड़ी शान्तिसे धर्म श्रवणादिमें बिताना चाहिए।

वैयावृत्यशिक्षाव्रत—पात्रोंके लिए दान देनेको कहते हैं। पात्रोंका विवेचन पहले किया जा चुका है। पात्रदानमें विशेष यह बात होनी चाहिए कि वह दान निरपेक्षभावसे दिया जाय। इसके अतिरिक्त संयमियोंकी सेवा करना, उनकी तकलीफें दूर करना, अर्थात् उनका अपनेसे जितना उपकार किया जा सके उतना करना यह सब वैयावृत्य नामक शिक्षाव्रत है।

इनके अतिरिक्त कुछ और भी गृहस्थोंके लिए आवश्यक बातें हैं—

पांच उदम्बर फल—बड़, पीपलफल, ऊमर, कठूमर (अंजीर) पाकरफल और आचार (अथाना) पुष्पशाक, बेल (बिल्व—बील) और मक्खन आदि वस्तुएं छोड़ने योग्य हैं। वे फल आदि भी नहीं खाने चाहिए, जिनसे हिंसा बहुत होती हो और जो अनुपसेव्य—खाने योग्य न हों।

पानी छानकर पीना चाहिए। पानी छाननेका छन्ना (गन्ना) छत्तीस अंगुल लंबा और चौवीस अंगुल चौड़ा होना चाहिए। पानी दोहरा छन्नेसे छानना चाहिए।

मांस, खून, गीला चमड़ा, हड्डी, पीप और मरे हुए शरीरको देखकर भोजन छोड़ देना चाहिए। फिर खाना उचित नहीं।

भोजन सदा मौन सहित करना चाहिए। मौन रखनेसे ज्ञानका विनय होता है। और अपने अभिमानकी रक्षा भी होती है।

रातमें भोजन नही करना चाहिए। क्योंकि रातमें जीमनेवालोंके अहिंसाणुव्रतका पालन नहीं हो सकता। इससे अधिक और क्या कहा जा सकता है।

मांस, मद्य, और मधूके खानेवाले नरकोंमें जाते हैं । क्योंकि वे जीवोंकी हिंसा द्वारा बहुत तीव्र पाप बन्ध करते हैं। वहां पलक उठाने मात्र भी उन्हे सुख नहीं मिलता । नारकियोंकी उत्कृष्ट आयु तेतीस सागरकी होती है। जिस नरकमें जितनी आयु होती है वह पूरी भोगनी पड़ती है। बीचमे उनकी मृत्यु नहीं होती। नरककी आयु पूर्ण कर वह जब मनुष्यभव आदिमें आता है तब भी वह रोगी, दरिद्री, कुबड़ा, लँगड़ा, लूला, जन्मान्ध, कोढ़ी, वामन, कुरूप आदि ही होता है।

और जो मांस, मद्य आदि नहीं खाते हैं वे स्वर्गमें जाते हैं। वहां वे देवकन्याओंके साथ खूब सुख भोगते हैं। वहांसे अपनी आयु पूर्ण कर मनुष्य पर्यायमें अच्छे कुलमें उत्पन्न होते हैं । वे अच्छे तेजस्वी होते हैं, खूब धनी होते हैं और पुण्यवान होते हैं।

श्रावकोंकी ग्यारा श्रेणियां—प्रतिमा—होती हैं। वे इसलिए कि उनके धारक क्रम क्रमसे अपनी उन्नति करते चले जायँ और धीरे धीरे संसारसे विरक्त—उदासीन—होकर आत्मकल्याणके लिये सच्चा मार्ग—मुनिपद—अंगीकार कर सकें।

दर्शनप्रतिमा, शुद्ध—निर्दोष सम्यदर्शनके पालन करनेको, संसार, शरीर, भोग—विलासादिसे विरक्त होनेको, सप्तव्यसन, पांच उदुम्बरफलके छोड़नेको, पंचपरमेष्ठिका शरण ग्रहण करनेको और तत्त्वपथ—सच्चेमार्गके गृहण करनेको कहते हैं।

व्रतप्रतिमा—पांच अणुव्रत, तीन गुणवत और चार शिक्षाव्रतके निरतिचार पालन करनेको कहते हैं।

सामायिकप्रतिमा—स्नानादिसे शुद्ध होकर जिनमन्दिरमें वा

और किसी पवित्र स्थानमें खड्गासन होकर या पद्मासन बैठकर त्रिकाल, मन बचन कायकी शुद्धि पूर्वक पञ्चपरमेष्ठिके नमस्कार करनेको, या उनके स्वरूपका चिन्तवन करनेको, अथवा अपने आत्मस्वरूपके विचारनेको कहते हैं।

प्रोषधोपवासप्रतिमा–अपनी शक्तिको न छिपाकर अष्टमी और चतुर्दशीको नियमपूर्वक प्रोषधोपवास करनेको कहते हैं। इस दिन सब समय ध्यानाध्यनादिमें बिताना चाहिए।

सचित्तत्यागप्रतिमा–मूल, फल, शाक, कन्द, फूल, बीज आदि सचित्त वस्तुओंके न खानेको कहते हैं।

रात्रिभोजनत्यागप्रतिमा–चार प्रकारके आहारका–अन्न, पीने योग्य, स्वाद लेने योग्य और चाटने योग्य पदार्थोंका–रात्रिमें त्याग करनेको कहते हैं।

ब्रह्मचर्यप्रतिमा–शरीरको मल मूत्रादि अपवित्र वस्तुओंके उत्पत्तिका स्थान, और उनका कारण, दुर्गन्धित, ग्लानिका कारण तथा मलप्रवाही–जिससे हरवक्त मल निकलता रहता है–ऐसा समझ कर कामसे विरक्त होनेको–कामवासनाके नष्ट कर देनेको–कहते हैं।

आरंभत्यागप्रतिमा–नौकरी, खेती करना, व्यापार करना आदि ये सब जीवोंकी हिंसाके कारण हैं, इसलिए इनसे विरक्त होनेको कहते हैं।

परिग्रहत्यागप्रतिमा–सुवर्ण, धन, धान्य, दासी, दास आदि दश प्रकारके परिग्रहमें मोह छोड़कर आत्मस्वरूपमें तल्लीन और सन्तोषी–निराकुल–होनेको कहते हैं।

अनुमतित्यागप्रतिमा–आरंभ–खेती, व्यापार आदि, परिग्रह-

धन, धान्य, सुवर्ण, दास, दासी आदि, ऐहिक– विवाह आदिक कामोंमें सम्मति न देनेको कहते हैं।

उद्दिष्टत्यागप्रतिमा–अपने लिए- अपने उद्देशसे–बनाये हुए भोजनके न करनेको कहते हैं।

इस प्रतिमाके दो भेद हैं–

पहला–खण्डवस्त्रका रखनेवाला।

दूसरा–लंगोटमात्र रखकर पाणिपात्रसे आहार करनेवाला।

इसके बाद मुनिधर्म ग्रहण किया जाता है।

आदिके छह प्रतिमाधारी जघन्यश्रावक कहलाते हैं। इससे आगे नववीं प्रतिमातक मध्यम श्रावक कहलाते हैं और दशवीं तथा ग्यारवीं प्रतिमावाले उत्कृष्ट श्रावक कहलाते हैं।

उक्त व्रतोंका जो श्रावक निर्दोष पालन करते हैं और निरंतर अपने आत्माको पवित्र बनानेका प्रयत्न करते हैं वे स्वर्गमें जाते हैं। और वहांसे आकर मनुष्यभव द्वारा निर्वाण–मोक्ष–प्राप्त करते हैं। कुमार! यह पवित्र गृहस्थधर्म तुम्हें धारण करना चाहिए।

प्रभो! आपने मुझपर बड़ा उपकार किया जो मुझे श्रावकधर्मके पवित्र उपदेशसे पवित्रित किया। मुझे आपसे एक बात पूछनी है, आप उसके उत्तर देनेकी कृपा करें तो बहुत अनुग्रह हो।

वह यह कि–श्रीमतीको जब मैंने देखा तब उसपर मेरा बड़ा प्रेम हुआ। इस असामयिक और बिना परिचयके प्रेमका क्या कारण है?

मुनि यों बोले–मेरुपर्वतके उत्तरकी और वीतशोक नामक एक शहर था। उसका राजा महेन्द्रविक्रम और उसकी प्रिया धनश्री थी। इनके एक पुत्र था। उसका नाम था नागदत्त। वहीं

एक साहूकार था। उसका नाम वसुदत्त और उसकी पत्नी वसुमती थी। यही श्रीमती तब वसुदत्तकी नागवसु नामकी पुत्री थी। इसका ब्याह नागदत्तसे हुआ था।

एक दिन वहां गुप्तमुनि आये। नागदत्त उनकी वन्दनाके लिए गया। मुनिसे धर्मका उपदेश सुनकर उसने पंचमीका व्रत ग्रहण किया। उस दिन उपवासके कारण भाग्यवश उसे कुछ तकलीफ हो गई। उसकी बुरी हालत देखकर मातापिताने उससे कहा—पुत्र ! देख तो अब उजेला हो गया है। तूं उठ और भगवानके दर्शन कर आ। पीछे कुछ भोजन करलेना, जिससे तेरी तबियत ठीक हो जायगी। असलमें थी तो तब भी रात ही पर मातापितासे पुत्रका कष्ट न देखा गया इसलिए उन्होंने पुत्रके शय्यागृहमें कुछ छेद करवाकर और उनमें काच लगवाकर उन्हें ऐसे बनवा दिये जिससे दिन जान पड़े।

पर नागदत्तने यही उत्तर दिया कि रात कितनी है यह मुझे मालूम है। पिताजी ! आप तकलीफ न उठाएं। मैं तबतक भोजन न करूंगा जबतक दिन अच्छी तरह न निकल जायेगा। मुझे प्राण देना मंजूर है पर व्रतभंग करना मंजूर नहीं। गर्ज यह कि उसकी तकलीफ बढ़ती ही गई, पर वह अपने विश्वासपर दृढ़ रहा।

जब उसने समझा कि अब मेरा जीना कठिन है, तकलीफसे छुटकारा मिलना मुश्किल है, तब उसने अपनी इच्छा और चित्तवृत्तिको सब ओरसे रोककर जिन भगवानके स्मरणमें लगाया। वह निरा कुलतासे कष्टपर विजय प्राप्त करने लगा। वह शान्तिको अपनाने लगा। जैसे जैसे उसका अन्तसमय निकट आता गया वैसे ही वह

बड़ी धीरताके साथ संसारके मायाजालसे मुक्त होने लगा। आखिर कुछ रातके रहते उसने अपनी जीवन लीला पूर्ण की।

पुण्य और धर्मके प्रभावसे वह सौधर्मस्वर्ग गया। वहां उसकी आयु पांच पल्यकी हुई। उसने अवधिज्ञानसे स्वर्ग प्राप्तिका कारण जाना। वहांसे वह अपने बन्धुओंको समझानेके लिए आया। उसके उपदेशसे उसकी स्त्रीको बड़ा वैराग्य हुआ। वह भी तपस्विनी बनकर तपश्चर्या करने लगी। अन्तसमय ससमाधि मृत्यु प्राप्तकर वह भी सौधर्म स्वर्गमें गई। और उसी सूर्यप्रभ—भूतपूर्व नागदत्त—की देवी हुई।

कुमार! स्वर्गसे निकलकर तू तो जयंधरका पुत्र हुआ और वह देवी विजयंधरकी पुत्री यह श्रीमती हुई है। नागकुमारको मुनिके उत्तरसे बड़ा सन्तोप हुआ। उसे पंचमी व्रतपर बड़ी श्रद्धा हुई। उसने मुनिराजसे पंचमीव्रतके करनेकी विधि पूछी। मुनिने उसे इस-तरह समझाया—

यह व्रत कार्त्तिक, फागुण या आषाढ़की सुदी पंचमीको किया जाता है। इसके पहले—अर्थात् चतुर्थीके दिन स्नानके बाद भोजन किया जाय। वह भोजन मांगा हुआ न होना चाहिये। इसके बाद मुनिके पास जाकर मन बचन कायकी शुद्धिपूर्वक व्रत ग्रहण करना चाहिए और उसतथा दिन उपवासके दिनको धर्मध्यान, शास्त्रस्वाध्याय आदिमें शान्तिके साथ बिताना चाहिए।

उपवासके दिन एक बात यह भी आवश्यक है कि उपवास करनेवाला न स्नान करे, न तैल लगावे, न भूषण पहरे, न पलंगपर सोये और न घर सम्बन्धी ही कोई काम करे। अर्थात् आत्माको

शान्त रक्खे। उसमें किसी कारणसे विकार न होने दे। कषायोंको खूब मन्द करे। क्योंकि उपवासका मतलब ही यह है कि उसमें " कषाय, विषय और आहारका त्याग किया जाय। केवल आहारके छोड़नेको तो आचार्योंने लंघन कहा है।"

पारणाके दिन नित्य क्रियाएं—पूजनादि करके पहले अपनी शक्तिके अनुसार पात्रोंको दान देना चाहिए। पश्चात् अपनेको आहार करना उचित है।

यह व्रत पांचवर्ष और पांच महीने तक किया जाता है। इसके बाद व्रतका उद्यापन करना चाहिए। और यदि उद्यापनके करनेकी शक्ति न हो व्रत दूना करना चाहिए। जो उद्यापन करना चाहें उन्हे नीचे लिखे माफिक विधि करना चाहिए।

पांच प्रतिमाएं बनवाकर उनकी प्रतिष्ठा करवानी चाहिए। और पांच घण्टा, पांच ध्वजा, और पांच पुस्तक जिन मन्दिरमें देकर महाभिषेक कराना चाहिए। मुनियोंके लिए पुस्तकें, आर्यिकाके लिए वस्त्र, उपकरण आदि और दीन दुःखितोंके लिए आहार औषधादि देना उचित है। इस प्रकार मुनिराजसे उपवास और उसकी उद्यापन विधि सुनकर नागकुमारने भी पञ्चमी व्रत ग्रहण किया। इसके बाद वह उन्हें नमस्कार कर अपने महल चला गया और अपनी प्रियाके साथ सुखसे रहने लगा।

कुछ दिनोंबाद नागकुमारकी जन्मभूमिसे मंत्री नयंधर आया। नागकुमारसे मिलकर उसे बड़ी खुशी हुई। वह नागकुमारसे बोला—कुमार ! महाराजको आपने जबसे छोड़े तबसे उनकी खबर तक भी न ली? वे आपके बिना बड़े व्याकुल हो रहे हैं। उन्होंने मुझे आपके

लिवानेको भेजा है। इस लिए अब आप विलम्ब न कर शीघ्र ही चलनेकी तैयारी करें।

कुमार अपने मामाके पास गया और उससे सब हाल कह कर अपनी प्रियाओंको साथ लिए हुए वह कनकपुरकी ओर रवाना हुआ। रास्तेमें वह अपनी सब प्रियाओंको तथा और जो वस्तुएं उसे प्राप्त हुई थीं वे सब भी साथ लेता आया। जब उसके मातापिताको पुत्रके आनेका हाल ज्ञात हुआ तब उन्हें बड़ी खुशी हुई। वे कुछ दूरतक पुत्रके लिवानेको उसके सामने गये।

नागकुमार भी उन्हें देखकर रास्तेमें सवारीपरसे उतर पड़ा। वह बड़ी जल्दी दौड़कर मातापिताके पावोंमे गिर पड़ा। उन्होंने उठाकर उसे बड़े प्रेमसे छातीसे लगाया। चिर वियोगके बाद आज पुत्रप्रेमसे माताकी छाती ठंडी हुई। उसकी आंखोंसे प्रेमाश्रु गिरने लगे। उसका गला भर आया। बड़ी कठिनतासे उसने पुत्रको आशीष दी। इसके बाद बड़े उत्सवके साथ पुत्रका शहरमें उन्होंने प्रवेश कराया।

प्रजाने भी अपने युवराजका खूब आदर सत्कार किया। घरघर खूब उत्सव मनाया गया। दीन अनाथोंको दान दिया गया। सच है—वियोगके बाद सम्मिलनका जो सुख होता है वह अपूर्व ही होता है।

विशाललोचना और उसका पुत्र श्रीधर अपने कर्त्तव्यपर शर्मिन्दा होकर पहले ही दीक्षित हो गये थे। सोतका डाह बड़ा बुरा होता है। नहीं तो असमयमें उन्हें क्यों ऐसा करना पड़ता? संसारसे विरक्त होना अच्छा है, पर वैराग्य का उदय जब स्वयं हृदयमें

हो तो। ऐसे मलिनताके कारणोंसे विरक्त होना उतना उत्तम नहीं कहा आ सकता।

जयंधर इस समय पूर्ण सुखी है। उनके पुत्र पौत्रका अपूर्व सुख है। अब वे संसार छोड़नेके प्रयत्नमें हैं। एक दिनकी बात है कि जयंधर भोजनके बाद हाथमें दर्पण लिए देख रहे थे। अचानक उनकी नजर एक फसेद बाल पर पड़ी। देखकर उन्हें पूर्वकी वैराग्य वासनाने उत्तेजित किया। अब एक घड़ीभरके लिए भी उन्हें घरपर रहना कठिन जान पड़ने लगा। उन्होंने उसी समय नागकुमारको बुलवाया और उसे राज्यभार सौंपकर वे बोले—

पुत्र ! आजतक तुम युवराज गिने जाते थे, पर अबसे तुम धराधिपति कहे जाओगे। देखो, यह पदस्थ अभिमान करनेका नहीं है, किसीको दुःख देनेका नहीं है। जो अपनी प्रजा है वह जिस तरह सुखी रहे और अन्याय का कभी प्रचार न हो उसीतरह तुम उसपर शासन करना। सत्यकी रक्षाके लिए अपने कुटुम्बियोंको भी दण्ड देना पड़े तो देना, पर पवित्र सत्यकी हत्या कभी मत करना। जिस कामको करो उसे बहुत सोच विचार और अपने राज्यके अनुभवियोंकी सच्ची सलाहसे करना। स्वार्थको कभी पास मत फटकने देना। विचारोंको उदार बनाना जो दुःखी हो उसकी सहायता करना। इसके अतिरिक्त यह नीति सदा ध्यानमें रखना कि

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥

और अधिक मैं तुम्हें क्या समझाऊं ?। तुम स्वयं बुद्धिमान् हो। पर मेरा जो कर्त्तव्य था, उसे मैंने पूरा किया। उसपर ध्यान देना

या न देना तुम्हारे वशका काम है। मैं यह चाहता हूं कि तुम अपने कुलकी मानमर्यादाको सदाके लिए चिरजीवित करनेकी कोशिश करोगे। बश, यही मेरा तुम्हें उपदेश है।

इसके बाद वे अपने राज्यके संचालकोंको खूब समझा बुझा-कर वनके लिए रवाना हो गये। वे सीधे पिहिताश्रव मुनिके पास गये और उनसे उन्होंने दीक्षा लेकर तपश्चर्या करना आरंभ की। उन्होंने थोड़े ही दिनोंमें ध्यानके बलसे आत्मशक्तिको खूब बढ़ा लिया। अन्तमें कर्मोंका नाश कर वे मोक्ष चले गये।

पतिवियोगसे पृथ्वीदेवीको भी राज्यमें रहना कठिन हो गया। वह भी एक आर्यिका द्वारा दीक्षित होकर तपश्चरण करने लगी और अन्तमेंमे ससमाधि शरीर परित्याग कर अच्युतस्वर्गमें देव हुई।

नागकुमारको अपने मातापिताके वियोगसे हुआ तो बड़ा ही दुःख पर उसे इससे बड़ा सन्तोष हुआ कि मातापिताका पुत्रके प्रति जो कर्त्तव्य होता है उसे पूर्ण कर वे प्रवृजित हुए हैं।

नागकुमारको राज्यधिकार मिला। उसने सबका सम्मान किया। व्याल, महाव्याल, अछेद्य, अभेद्य, सहस्रभट आदि अपने पूर्ण शुभचिन्तक जितने मित्र थे उनके लिए खूब धन दिया। किसी के लिए उसने गांव दिया, किसीको जागीर दी। अपनी जितनी स्त्रियां थीं उनके लिए भी उसने ग्राम आदि दिये। सब रानियोंके बीचमें पट्टरानीका पद श्रीमती, धरणिसुन्दरी, गणिकासुन्दरी और त्रिभुवनसुन्दरीको मिला।

नागकुमार बड़े सुखचेनसे रहने लगा। वह धर्मक्रियाओंको

नित्यप्रति बड़ी श्रद्धाभक्तिसे करता था । सज्जन धर्मात्माओंका खूब सत्कार करता था । प्रजापालनमें वह कभी असावधानी न करके न्यायका सदा साथ देता था । प्रजा उसके राज्य शासनसे बड़ी खुश रहा करती थी ।

नागकुमार बड़ा विनोदी था । वह कभी हाथियों और कभी घोडोंपर चढ़कर उन्हें मानमाना घुमाता । कभी वह वनविहारके लिए जाता । कभी वह अपने मित्रोंके साथ जलक्रीड़ामें समय बिताता, कभी वह गेंद खेलता कभी वह अच्छे अच्छे विद्वानोंको बुलाकर उनका शास्त्रार्थ सुनता, कभी वह कवियोंकी सुधाधारा बाणीका स्वाद लेता और कभी वह स्वयं भी कविता लिखता ।

नागकुमार धर्मात्मा भी अच्छा था । उसके हृदयमें बड़ी दया थी । किसीको भी यदि वह दुखी देखता तो उसी समय उसके लिए सब तरहका प्रबन्ध करता । वह भगवानकी पूजन करता । पात्रोंको दान देता, जिनमन्दिर बनवाता, उनकी प्रतिष्ठा करवाता । अपनी राजधानीमें विद्यालय, पाठशाला, पुस्तकालय, श्राविकाश्रम, अनाथालय, औषधालय आदि सर्वोपयोगी संस्थाएं भी उसने खुलवा रक्खीं थीं । वह बहुतसे असमर्थ विद्यार्थियोंको अपने राज्यसे छात्रवृत्ति देता । उसका यह लक्ष्य सदा रहा है कि उसकी प्रजा विदुषी हो, धनी हो, धर्मात्मा हो, दयालु हो । इसके लिए कभी किसी बातकी त्रुटि उसमें नहीं आने देता । दयालु राजाका प्रजाके प्रति जो कर्त्तव्य होता है नागकुमार उसे पूर्ण रीतिसे निवाहता था ।

कुछ दिन आनन्दसे बीतनेपर उसे एक पुत्ररत्नकी प्राप्ति हुई। पुत्रका शुभनाम देवकुमार रक्खा गया। वह भी थोड़ी ही उमरमें अच्छा विद्वान् हो गया।

बड़े बड़े राजे महाराजे नागकुमारकी छत्रछायामें रहने लगे। उसके न्यायराज्यकी चारों ओर खूब प्रतिष्ठा हो गई।

एक दिन नागकुमार अपने महलपर बैठा हुआ था कि उसे एक अत्यन्त सुन्दर बादलोंका दृश्य दीख पड़ा। उसने उसका चित्र लेना चाहा पर इतनेहीमें देखते देखते वह बादलका टुकड़ा छिन्न भिन्न हो गया। उसकी विनाशशील दशाके देखनेसे उसके चित्त-पर भी उसका गहरा असर पड़ा। उसने संसारकी भी यही दशा समझकर पुत्रको बुलवाया और राज्य उसे सौंपकर आप व्यालादि मित्रोंके साथ प्रवृजित हो गया। उसने कैलास पर्वतपर जाकर खूब तपश्चर्या की, शान्तिके परीषह सहीं। अन्तमें वह कर्मोका नाशकर मोक्ष गया। व्याल, अछेद्य और अभेद्य भी मोक्ष गये। इनके अति-रिक्त सहस्रभट आदिक अपने अपने परिणामोंके अनुसार सौधर्म आदि स्वर्गमें गये।

नागकुमारकी पूर्ण आयु एक हजार वर्षकी थी। उसमें सत्तर वर्ष वह कुमार रहा, आठसौ वर्षतक उसने राज्य शासन किया, चौसठवर्ष उसके छद्मस्थ अवस्थामें बीते और छ्यासठवर्ष वह केवल-ज्ञानी रहा।

नागकुमारके बाद उसकी स्त्रियां भी आर्यिका हो गई और तपश्च-रण द्वारा अपने अपने भावोंके अनुसार उन्होंने भी स्वर्गादि सद्गति प्राप्त की।

गौतम भगवानके द्वारा उपदिष्ट नागकुमारका पावन चरित श्रेणिकने सुना। उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। क्योंकि यह चरित सुखका देनेवाला और पुण्यका कारण है। इसके बाद वह गौतम-स्वामी को नमस्कार कर अपनी राजधानीमें वापिस लौट आया और आनन्दसे रहने लगा।

